₹5/

ग्लोबल ऑब्ज़र्वर

मतलब निर्भीक और निष्पक्ष

इस छोर से उस छोर तक

RNI NO. DELHIN/2016/71079

राष्ट्रीय साप्ताहिक

वर्ष : 09, अंक : 21

16-22 जून, 2025

डॉ. हरिबल्लभ सिंह 'आरसी'

साहित्य एवं संस्कृति को समर्पित व्यक्तित्व

ग्लोबल ऑब्ज़र्वर

मतलब निर्भीक और निष्पक्ष

इस छोर से उस छोर तक

RNI NO. DELHIN/2016/71079

ग्लोबल ऑब्ज़र्वर पढ़ें और पढ़ाएं

एक शुभचिंतक, दिल्ली

जीवन बांटने की अनूठी मिसाल

क्षमा शर्मा
स्तंभकार

जयपुर का सवाई मान सिंह अस्पताल। यहां छियालीस वर्षीय गुड्डी भर्ती थी। गंभीर बीमारी के कारण, उसके दोनों गुर्दे खराब हो गए थे। वह डायलिसिस पर थी। लेकिन एक हद के बाद डायलिसिस भी काम करना बंद कर देता है। उसकी हालत बिगड़ रही थी। इसलिए गुड्डी के लिए गुर्दे का प्रत्यारोपण जरूरी था। डाक्टर ऐसे दानदाता को ढूंढ़ रहे थे, जिससे गुड्डी का ब्लड ग्रुप मिलता हो। साथ ही वह स्वस्थ भी हो। अपने देश में आसानी से अंग दान करने वाले मिलते भी नहीं। गुड्डी की देखभाल करने के लिए वहां उसकी चौरासी वर्षीय मां बुधो देवी भी मौजूद रहती थीं। जब उन्हें इस बात का पता चला, तो उन्होंने डाक्टरों से प्रार्थना की कि वह अपनी बेटी को गुर्दा दान करना चाहती हैं। लेकिन उनकी उम्र आड़े आ रही थी। आम तौर पर माना जाता है कि अंग दान देने वाले की अधिकतम उम्र, साठ से पैंसठ वर्ष के बीच में ही हो। लेकिन बुधो देवी डाक्टरों से आग्रह करती रहीं। डाक्टरों ने जब उनके विभिन्न परीक्षण किए, तो वह स्वस्थ निकलीं। उन्हें कोई गम्भीर बीमारी भी नहीं थी। यही नहीं, उनका ब्लड ग्रुप भी गुड्डी से मिल गया।

शुरूआती ऊहापोह और मां बुधो देवी के आग्रह को देखते हुए डाक्टरों ने इस चुनौती को स्वीकार किया। फिर बुधो देवी का गुर्दा निकालकर, उनकी बेटी को प्रत्यारोपित कर दिया। अब मां- बेटी दोनों स्वस्थ हैं। आखिर एक मां का अपनी बेटी को इससे बड़ा उपहार क्या हो सकता है। उन्होंने इसकी मिसाल कायम की और बेटी का जीवन बचाया। डाक्टरों की चेतावनी के बावजूद, अपनी बड़ी उम्र के खतरों की भी परवाह नहीं की। जब बुधो देवी से इस बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि उन्हें फैसला लेने में न कोई दिक्कत हुई, न डर लगा। उन्होंने यह भी कहा कि वह तो अपनी उम्र जी चुकीं। यदि उनके अंग दान से उनके किसी बच्चे को जीवन मिल सकता है, वह दर्द से मुक्त हो सकता है, तो वह ऐसा क्यों न करें। उन्होंने यह भी बताया कि आज तक वह कभी बीमार नहीं पड़ी हैं। इस पीढ़ी की महिलाओं ने अथक परिश्रम किया है। इसी का कारण है कि बीमारियां उनके शरीर में घर नहीं बनाती हैं। वर्ना तो इन दिनों छोटी-छोटी उम्र में ही बहुत- सी लड़कियां और महिलाएं गम्भीर रोगों का शिकार हो रही हैं। जीवन में जितना मशीनीकरण बढ़ा है, शारीरिक श्रम उतना ही घटा है। इसीलिए बीमारियां जल्दी दस्तक देने लगती हैं।

एक मां के इस वक्तव्य ने झकझोर कर रख दिया। इतना बड़ा त्याग, जिसमें जान भी जा सकती थी, इसकी कोई परवाह नहीं की। इस मां को चिंता इस बात की थी कि कैसे भी वह अपनी बेटी का जीवन बचा सकें। ऐसी मां को सलाम है। आम तौर पर तो हमारे समाज में कुछ इस तरह की अवधारणा कायम है कि माता-पिता अपनी बेटियों के जीवन पर कोई ध्यान नहीं देते। बुधो देवी ने बेटी बचाओ अभियान के बारे में हो सकता है, सुना हो, न सुना हो, लेकिन उन्होंने आगे बढ़कर अपने कर्तव्य का निर्वहन किया। कायदे से तो इस मां को बड़े से बड़ा पुरस्कार भी कम पड़ जाए। वह न तो बहुत धनवान हैं, न उन्होंने बेटियों के अधिकारों के बारे में कुछ पढ़ा होगा। लेकिन ऐसी मांएं हमारे समाज में कोई अजूबा भी नहीं, जो अपने बच्चों के लिए जान की बाजी लगा देती हैं। सवाई मानसिंह अस्पताल के वे डाक्टर, जो इस आपरेशन से जुड़े थे, बुधो देवी की मजबूत इच्छाशक्ति की तारीफ कर रहे हैं। उनका कहना है कि यह एक मां का प्यार तो है ही, उन लोगों के लिए भी मिसाल है, जो अंग दान करना नहीं चाहते। शायद इस उदाहरण से अन्य लोगों को प्रेरणा मिले। बुधो देवी को तीन दिन बाद ही अस्पताल से छुट्टी दे दी गई थी।

गुर्दा प्रत्यारोपण से जुड़े तीन मामलों को यह लेखिका भी जानती है। दिल्ली विश्वविद्यालय की एक प्राध्यापिका के भी दोनों गुर्दे खराब हो गए थे। तब भी उनकी मां ने गुर्दा दान किया था। एक दूसरे मामले में दो बहनें थीं। दोनों ही अविवाहित। अचानक बड़ी बहन की तबीयत खराब रहने लगी। डाक्टरों ने बताया कि उसके दोनों गुर्दे खराब हो गए हैं। बहुत दिनों तक डायलिसिस भी हुई लेकिन बड़ी बहन की तबीयत बिगड़ती गई। तब उसकी छोटी बहन ने उसे अपना गुर्दा दान करने का फैसला किया। बाद में जब उसके किसी रिश्तेदार ने कहा कि तुम्हारे सामने तो जिंदगी पड़ी थी। ऐसा क्यों किया, तो छोटी बहन ने कहाझ मेरी बहन के सामने भी तो जिंदगी पड़ी थी। क्या हो गया जो उसे गुर्दा दे दिया। अब हम दोनों एक-एक गुर्दे से ही काम चला लेंगे। कम से कम मेरी बहन का साथ तो रहेगा। ये दोनों घटनाएं दशकों पहले की हैं। तीसरी घटना कुछ साल पहले की है। दूरदर्शन में काम करने के दिनों में एक महिला ने अपनी ननद का किस्सा सुनाया। बताया कि उसकी ननद को पतली दिखने का बड़ा शौक था। इसलिए वह कुछ खाती ही नहीं थी। अन्न तो बिल्कुल नहीं। इससे उसके गुर्दे सिकुड़ गए। खराब हो गए। जान बचाने के लिए प्रत्यारोपण जरूरी था। उसके पिता का ब्लड ग्रुप भी मिल गया। वह स्वस्थ भी थे। लेकिन जिस दिन गुर्दा प्रत्यारोपण का आपरेशन होना था, उस दिन, वह अस्पताल छोड़कर भाग निकले। बहुत दिनों तक घर वापस नहीं आए। और उस लड़की की जान नहीं बचाई जा सकी।

हमारे देश में अंग दान को लेकर भ्रांतियां भी बहुत हैं। इन दिनों बहुत से अस्पतालों में ऐसे काउंसलर मौजूद होते हैं, जो निधन की स्थिति में घर वालों को समझाते हैं कि वे मृत व्यक्ति के अंग दान कर दें। इससे वह हमेशा दूसरों के भीतर जीवित रहेगा, या रहेगी। बहुत से लोगों को ये बात समझ में आती है और वे ऐसा करते हैं। कई बार तो ऐसा होता है कि कोई दिल दिल्ली में मिला और उसकी जरूरत चेन्नई में है। ऐसे में ग्रीन कॉरिडोर बनाकर जल्दी से जल्दी अंग को जरूरतमंद के पास पहुंचाया जाता है।

आम तौर पर आखों के कोर्निया, लिवर, गुर्दे, दिल आदि दान किए जाते हैं। डायबिटीज के वे मरीज जो जीवन भर के लिए इंसुलिन पर निर्भर होते हैं, क्योंकि उनका अग्नाशय या पैन्क्रियाज इंसुलिन नहीं बनाता। इस डायबिटीज को टाइप वन डायबिटीज कहा जाता है। जो आम तौर पर बाल्यावस्था या किशोरावस्था में हमला बोलती है और कभी ठीक नहीं होती। पहले अपने देश में टाइप वन डायबिटीज के बहुत कम मामले होते थे। लेकिन खान-पान की बदलती शैली के कारण इन रोगियों में बेतहाशा वृद्धि हो रही है। विशेषज्ञ कहते हैं कि यदि टाइप वन के मरीजों को पैन्क्रियाज प्रत्यारोपित कर दिया जाए, तो इंसुलिन लेने की जरूरत खत्म हो सकती है। अंग दान से सम्बंधित संस्थाओं को इस बारे में भी सोचना चाहिए। अपने देश में तीन अगस्त को अंग दान दिवस भी मनाया जाता है। वैज्ञानिक यह कोशिश भी कर रहे हैं कि मनुष्य के तमाम अंगों को प्रयोगशाला में ही उगा सकें।

(लेखिका वरिष्ठ पत्रकार हैं।)

ग्लोबल ऑब्ज़र्वर
मतलब निर्भीक और निष्पक्ष — इस छोर से उस छोर तक
RNI NO. DELHIN/2016/71079

वर्ष : 09, अंक : 21
16-22 जून, 2025

संपादक
ए आर आज़ाद

ब्यूरो प्रमुख
रुफी शमा

बेगूसराय ब्यूरोचीफ
एस आर आज़मी

ब्यूरो ऑफिस बिहार
बजरंगबली कॉलोनी, नहर रोड,
जज साहब के मकान के सामने, फुलवारी शरीफ,
पटना, बिहार-801505

संपादकीय एवं पंजीकृत कार्यालय
81-बी, सैनिक विहार, फेज़-2, मोहन गार्डेन,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059
Email: globalobserverindia@gmail.com
MOBILE. 9810757843
Whatsapp. 9643709089

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक
ए आर आजाद द्वारा 81-बी, सैनिक विहार, फेज़-2, मोहन गार्डेन, उत्तम नगर, नयी दिल्ली-110059 से प्रकाशित एवं चंद्रशेखर प्रिंटर्स, डब्लूय जेड-439, नारायणा विलेज, नई दिल्ली-110028 से मुद्रित।
संपादक- ए आर आज़ाद

RNI NO.: DELHIN/2016/71079
Email:globalobserverindia@gmail.com

समाचार-पत्र में छपे सभी लेख, लेखकों के निजी विचार हैं, इनसे संपादक या प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं। समाचार-पत्र में छपे लेखों के प्रति संपादक की जवाबदेही नहीं होगी। सभी विवादों का समाधान दिल्ली की हद में आने वाली सक्षम अदालतों में ही होगा। *उपरोक्त कुछ पद अवैतनिक हैं।*

आवरण 16
डॉ. हरिवल्लभ सिंह 'आरसी' की साहित्य-साधना

ग़ौरतलब 03
जीवन बांटने की अनूठी मिसाल

प्रसंगवश 10
मोबाइल पर आरबीआई का संदेश...

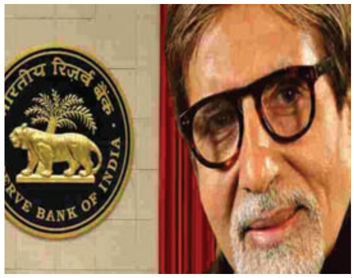

दृष्टिकोण 06
जब सबकुछ यहीं रह जाना...

पड़ताल 12
दोस्ती की राह पर भारत-मालदीप

प्रसंग 30
शहरों के टैग लाइन

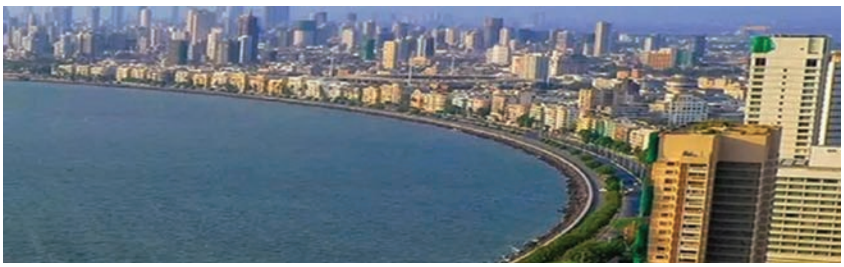

सरकार को लघु पत्र-पत्रिकाओं को भी संजीवनी देनी चाहिए

सरकार को विज्ञापन देना बंद कर देना चाहिए। या सबका सरकारी विज्ञापन में हिस्सा होना चाहिए। लघु पत्र-पत्रिकाओं को प्रोत्साहन और संजीवनी देना सरकार का काम है। बड़े अख़बार वाले उद्योगपति हैं, मीडियाकर्मी नहीं। लेकिन जितने भी लघु पत्र-पत्रिका वाले लोग हैं, वे मीडियाकर्मी हैं। उन्हें ख़बरों की समझ होती है। वे ख़बरों का मान रखना जानते हैं। और ज़रूरत पड़ने पर ख़बरों में जान डालना भी जानते हैं। इसलिए सरकार को लघु पत्र-पत्रिकाओं को भी संजीवनी देनी चाहिए।

मीडिया के सामने चुनौतियों का अंबार है। मीडिया को आप जितनी भी श्रेणी में बांट लें, लेकिन सबकी स्थिति चिंताजनक है। कोई शराब और सिगरेट के साथ अपने फेफड़े को जला रहा है, तो कोई एड़ी चोटी एक कर अपने वजूद को बचाए और बनाए रखने की कोशिश में अपना ख़ून-पसीना बहा रहा है।

मीडिया के साथ आज कोई खड़ा नहीं है। मीडिया को गिरोह में बांटकर उसका दोहन हो रहा है। सरकार ने मशहूर मीडिया घरानों को अपनी तरफ़ अपनी तरह से कर लिया है। नतीजे में आज मुख्यधारा का मीडिया जनधारा में बहने से गुरेज कर रहा है। उसे जनता के सवालों पर परहेज होने लगा है। ऐसे मीडिया के लिए देश प्रथम नहीं, सरकार प्रथम है।

सरकार ने लघु और सरकार के संकेत के मापदंड पर खरे नहीं उतरने वाले मीडिया और पत्रकारों के लिए कोई रास्ता नहीं छोड़ा है। सरकारी विज्ञापन तो दूर की बात सरकार ने उसके हक़ में हर तरह की कटौती कर दी है। सरकार ने मान्यता प्राप्त मीडिया से उसकी रियायत छीन ली है। रेलवे में कोरोना के नाम पर बंद की गई रियायत और सुविधा अभी तक चालू नहीं हुई है। मान्यता प्राप्त पत्रकारों को मिलने वाले मकान का कुछ पता नहीं। यह हाल केंद्र और राज्यों के मान्यता प्राप्त पत्रकारों का है। राज्य हो या केंद्र की सरकार सब के सब ने सिर्फ हेल्थ सेक्टर में इन मान्यता प्राप्त पत्रकारों को कुछ सुविधा दे रखी है। इसके अलावा मान्यता प्राप्त पत्रकारों को बंद की गई सुविधा के बारे में कोई सूचना भी नहीं है।

दरअसल लघु पत्र-पत्रिकाओं का सरकारी विज्ञापन पर पहला अधिकार माना जाता है। लेकिन वर्षों बरस से लघु पत्र-पत्रिकाओं के साथ अनदेखी होती आ रही है। मीडिया अभी तो कुछ बोलने की स्थिति में नहीं है। वो देख रहा है कि बड़े घराने चरण स्पर्श की मुद्रा में हैं, तो हमारी क्या औक़ात है? और यही मन में टीस बनकर उनके आसपास मंडराता है।

सरकार को विज्ञापन देना बंद कर देना चाहिए। या सबका सरकारी विज्ञापन में हिस्सा होना चाहिए। लघु पत्र-पत्रिकाओं को प्रोत्साहन और संजीवनी देना सरकार का काम है। बड़े अख़बार वाले उद्योगपति हैं, मीडियाकर्मी नहीं। लेकिन जितने भी लघु पत्र-पत्रिका वाले लोग हैं, वे मीडियाकर्मी हैं। उन्हें ख़बरों की समझ होती है। वे ख़बरों का मान रखना जानते हैं। और ज़रूरत पड़ने पर ख़बरों में जान डालना भी जानते हैं। इसलिए सरकार को लघु पत्र-पत्रिकाओं को भी संजीवनी देनी चाहिए।

इतने महान लोकतंत्र वाले देश में मीडिया के एक बड़े वर्ग के साथ सरकारी उदासीनता चौंकाती भी है, और कचोटती भी है। किसी लोककल्याणकारी सरकार से कोई भला ऐसी उम्मीद कैसे रख सकता है कि वह एक बड़े वर्ग के साथ हो रहे नाइंसाफ़ी पर चुप्पी साधे रहे।

इस देश का समाज भी कम दोषी नहीं है। वे भी बड़े घरानों से निकले हुए पत्र-पत्रिकाओं पर ही अपना धन लुटाना चाहते हैं। उनके लिए देश का सच्चा पत्रकार और देश के सच्चे पत्र-पत्रिकाएं कोई मायने नहीं रखते हैं। नतीजे में देश की बागडोर और सत्ता पर क़ाबिज लोग भी अपनी तरह से देश को हांकते हैं। इस स्थिति और परिस्थिति पर सबको गंभीरत से सोचना होगा।

रामस्वरूप रावतसरे
स्तंभकार

जब सब कुछ यहीं रह जाना है...

हमारा शरीर पंचतत्व यानी पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि, वायु से बना है। इन सब से बना यह शरीर इनका ही सेवन करता है और अंत में इन्ही में समा जाता हैं। मृत्यु को प्राप्त होने तक हम जो भी करते है, वह कर्म कहलाता हैं। कर्म ही हमारे आगामी जीवन का आधार बनता है, ऐसा शास्त्र कहते है। हमारा यह जीवन भी प्रारब्ध के कर्मों के अनुसार ही है। पूर्व जन्म में हमारे किस प्रकार के कर्म थे किसे हमने दिया था और किससे लिया था। उसका ही यह जीवन लेखा जोखा बताया जाता है।

प्रायः देखा गया है कि समृद्ध एवं धर्मपरायण घरों में ऐसे जीव जन्म लेते है कि उनके कारण परिवार दुखी ही रहता है, सब कुछ होकर भी सुख शान्ति नहीं होती। वे आने वाले जीव का ही चुकारा करते देखे जा सकते है। बताया जाता है ऐसे जीव प्रारब्ध का हिसाब करने ही आये होते हैं। एक ऐसा भी परिवार होता है जो कि बहुत ही गरीब, फटेहाल बडी मुश्किल से अपने बच्चों का पालन पोषण करते है लेकिन समय पाकर बच्चे सब कुछ बदल देते है। सब तरफ सुख ही सुख दिखाई देता है, यानी वे बच्चे प्रारब्ध का चुकाने आये होते है।

खैर इसकी बात नहीं करें तो भी मनुष्य का जीवन क्या है? कितना है? वह जो कुछ भी प्रारब्ध के कर्मो से या इस जन्म के सतकर्मो से करता है। वह उसके साथ कितना व किस रूप में जाता है। आदमी जब तक है उसकी आभा या कर्मो का प्रकाश उसके चारों ओर है। जिस दिन ये खत्म होगा, उस दिन सबसे पहले भूमि उसे खड़ा नही रहने देगी। स्वांश यानि वायु का प्रवेश शरीर में कम होने लगेगा। अग्नि मंद पड़ने लगेगी। शरीर पर आकाश का आवरण क्षीण होने लगेगा। जल शरीर में अपनी उपस्थिति को इस रूप में ले आयेगा कि खून ही पानी बन जायेगा। कुल मिलाकर इसका निचोड़ यही है कि पंचतत्व से बना यह शरीर पंचतत्वों में ही समा जाता है।

अपने जीवन काल में मनुष्य अपने खाते के अनुसार ही खाता है। उससे अधिक नहीं, यदि वह ऐसा करता है तो उसे उसका हिसाब भी इसी जन्म में देना होता है। पशु, पक्षी प्रकृति से उतना ही लेते है, जितना उन्हें शरीर को चलाये रखने के लिए आवश्यक होता है। मनुष्य की प्रवृति इससे उलट है लेकिन यह भी सत्य है कि मनुष्य कितना भी संग्रह कर ले, उसे उतना ही मिलेगा जो कि उसके खाते में है। मनुष्य आज को दाव पर लगाकर कल सुरक्षित रखने के लिए धन संग्रह करता है लेकिन कल तभी सुरक्षित है, जब आज का किया गया कर्म सही एवं श्रेष्ठ है। श्रेष्ठजन भी यही कहते है कि कल सुरक्षित तभी होगा जब आज श्रेष्ठ होगा। आज का दान, आज की भगवत आराधना, आज का सत्स्वाध्याय, आज की निस्वार्थ सेवा, आज का चिंतन ही कल के फल को निर्धारित करता है।

लता मंगेशकर के अंतिम शब्द कि ''इस दुनिया में मौत से ज्यादा वास्तविक कुछ भी नहीं है। दुनिया की सबसे महंगी ब्रांडेड कार मेरे गैरेज में खड़ी है लेकिन मुझे व्हीलचेयर पर ले जाया जाता है! इस दुनिया में हर तरह के डिजाइन और रंग के महंगे कपड़े, महंगे जूते, महंगे साजो सामान सब मेरे घर में हैं। लेकिन मैं अस्पताल के उपलब्ध कराए गए छोटे से गाउन में हूं! मेरे बैंक खाते में बहुत पैसा है लेकिन मेरे किसी काम का नहीं है। मेरा घर मेरे लिए महल जैसा है लेकिन मैं अस्पताल में एक छोटे से बिस्तर पर लेटी हूं। मैं इस दुनिया के फाइव स्टार होटलों में घूमती रही लेकिन अब मुझे अस्पताल में एक लैब से दूसरी लैब में ट्रांसफर किया जा रहा है! एक समय था जब 7 हेयर स्टाइलिस्ट रोजाना मेरे बाल बनाते थे लेकिन आज मेरे सिर पर बाल नहीं हैं। मैं दुनिया भर में कई तरह के मंहगें से मंहगें होटलों में भोजन करती रही हूं लेकिन आज दिन में दो गोलियां और रात में नमक की एक बूंद मेरी डाइट है। मैं दुनिया भर में अलग-अलग विमानों में उड़ रही थी। लेकिन आज दो लोग अस्पताल के बरामदे में जाने में मेरी मदद करते हैं। किसी भी सुविधा ने मेरी मदद नहीं की। किसी भी तरह से सुकून नहीं लेकिन कुछ अपनों के चेहरे, उनकी दुआएं और इबादत मुझे जिंदा रखते हैं। यह जीवन है, कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप कितनी दौलत के मालिक है। अंत में आप खाली हाथ जाते हैं, दयालु बनें। किसी की भी मदद करें, जो आप कर सकते हैं। धन और शक्ति के लिए लोगों को महत्व देने से बचें। अच्छे इंसानों से प्यार करें, जो तुम्हारे लिए हैं, उन्हें संजोए रखें, किसी को दुख मत दें, अच्छे बनें, अच्छा करें क्योंकि वही तुम्हारे साथ जाएगा।''

हमें भी लता मंगेशकर के उपरोक्त शब्दों पर गौर करना चाहिए। यही इस जीवन की वास्तविकता है, सच्चाई है। हमें लेने के भाव के स्थान पर देने का भाव अधिक प्रभावी रखना चाहिए। इसलिए कि जो हम कल को ध्यान में रखकर इकट्ठा कर रहे है, वह इस शरीर की तरह यहीं रहेगा। हमारे साथ सिर्फ और सिर्फ देने के भाव से किए गये कर्म से मिली दुआ ही जायेगी। इस संसार में आने वाला जीव अपना भाग्य साथ लेकर आता है। इसलिए किसी के लिए भी अधिक चिंतित नहीं रहें। आज का हमारा कर्म सही और ईमानदारी से पूरा हो, इसका पूरा ध्यान रखें। हम यात्री हैं, संसार एक सराय है और कुछ नहीं। जब तक सामने है सब अपने है। उसके बाद जो सामने होंगे वे अपने होगे। ऐसे में किसी से अधिक लगाव रखना या अधिक उम्मीद रखना ही दुख का कारण बनता है।

अंत समय में लता मंगेशकर के ना तो पैसा काम आया और ना ही प्रतिष्ठा क्योंकि हम जो कुछ भी इस संसार से लेते है या कल को ध्यान में रखकर इक्टठा करते है, उसे यहीं छोड़ कर जाना होता है। हमसे पहले भी बहुत बड़े बड़े महाबली हुए है, ज्ञानी ध्यानी हुए है लेकिन समय आने पर ना तो उनका महाबल चला और ना ही ज्ञान की तलवार। जब पंचतत्व इस शरीर से अपने को अलग कर लेते है, तब किसी भी प्रकार का बल काम नहीं करता है। जीव को सब कुछ छोड़ कर जाना पड़ा। इस संसार में स्थाई कुछ भी नहीं है। इसलिए ऐसा कुछ करें कि दूसरों को किसी प्रकार की तकलीफ ना हो और हमें आत्म संतुष्टि बनी रहे। अधिक सामान नहीं अधिक साधना की ओर ही हमारा मन चले बस।

II रामाशीष
स्तंभकार

नदियों की सुरक्षा में सभ्यता सुरक्षित

प्रकृति के पंच भूतों में से एक जल जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक परम आवश्यक है वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकी एवं औद्योगिक क्षेत्र के विकास एवं उन्नयन के लिए जल एक अत्यावश्यक संसाधन हैं । नदियां हमें जल ही नहीं देती बल्कि हमारे समग्र जीवन प्रणाली की जीवनरेखा हैं।जैव विविधता, मिट्टी, रेत ,जल एवं अविरल प्रवाह मिलकर नदी की गुणवत्ता निर्धारित करते हैं। व्यक्ति के जीवन यापन के लिए ऑक्सीजन का महत्व हैं ,ठीक उसी प्रकार नदियों के जीवन के लिए इन सूक्ष्म से लेकर विशाल धाराओं की उपादेयता हैं। जैव विविधता नदियों के जीवन के लिए प्राणवायु हैं,जो नदियों के जल के लिए अति आवश्यक है जो उनके जल को शुद्ध करके ऑक्सीजन से भरते हैं इसलिए नदी में इतना जल हो कि वह जैव विविधता का ऑक्सीकरण कर सके।

मानवीय सभ्यता के लिए नदियों को ईश्वरीय वरदान माना जाता हैं ।पृथ्वी पर जीवन का आधार नदियां हैं । भारतवर्ष में संस्कृतियों ,सभ्यता के विकास के समय से नदियां सर्वदा पूजनीय एवं श्रद्धा की धारक रही हैं । नदियों को साक्षात शक्ति एवं भक्ति का प्राकट्य माना गया हैं ।ईश्वरीय आराधना में नदियों का विशेष योगदान रहा हैं। अर्थववेद में नदी को माता कहा गया है। नदियां हमारी माता है, जो हमें जल रूपी दूध प्रदान करती हैं। पृथ्वी पर नदियां सुरक्षित हैं तो मानवीय जीवन भी सुरक्षित हैं ।जीवनदायिनी नदियां व्यक्ति को जल मार्ग ही नहीं बल्कि वर्षा के जल को सहेजकर धरती के नमी को भी बनाए रखती हैं। महर्षि मनु ने नदी के स्थान को अत्यधिक गौरवपूर्ण बताया हैं । उपनिषदों में नदी को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया है। नदी सभी गुरुजनों में सर्वोच्च स्थान रखती है।

महाभारत में गंगा जी की उपादेयता को बताते हुए कहा गया है कि परशुराम जी क्षत्रिय विनाशक होते हुए भी गंगा माता के निवेदन पर देवव्रत को शिक्षा प्रदान किए थे। नदियां परम गुरु हैं। नदियों को प्रदूषित करने में कारपोरेट जगत का विशेष योगदान है, क्योंकि उनके सह पर अवैध खनन ने भी नदियों को प्रदूषित किया हैं ।क्षेत्रीय स्तर, राष्ट्रीय स्तर एवं वैश्विक स्तर पर नदियों के महत्व को रेखांकित करना एवं लोगों में जागरूकता पैदा करना सभ्य नागरिक समाज की विशिष्टता हैं ।हम सभी लोगों को नदियों के स्वास्थ्य उन्नयन, नदी प्रदूषण के रोकथाम के लिए प्रयास करना, नदी प्रदूषण, नदी संरक्षण एवं नदी स्वच्छता को बढ़ावा देने के लिए जागरूक होना चाहिए। अमेरिकी शोध संस्थान,' प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल अकैडमी आफ साइंसेज ' द्वारा प्रकाशित शोध रपट के अनुसार, पेरासिटामोल, निकोटीन, कैफीन, मिर्गी की दवा एवं मधुमेह की दवाइयां नदियों के जल को प्रदूषित एवं संक्रमित कर रहे हैं। शोध संस्था के प्रतिवेदन के अनुसार ,नदियों में विषाक्त की मात्रा बहुत ज्यादा मात्रा में पाई जा रही हैं। प्लास्टिक कचरा, पॉलीथिन एवं पॉलीथिन की पनिया नदियों को प्रदूषित करने का बड़ा कारण हैं। एक प्रतिवेदन के अनुसार,संसार भर में 20 नदियां हैं, जिनके सहारे बहुत बड़ी मात्रा में प्लास्टिक महासागरों में बहकर आ रहे हैं।

समाज में नदियों के महत्व, उपादेयता,संरक्षण की आवश्यकता, जागरूकता एवं वैज्ञानिक सोच के द्वारा नदियों को संरक्षित किया जा सकता हैं ।नदियों के प्रति समाज की सहयोग एवं सुरक्षा का दृष्टिकोण नदियों को स्वस्थ एवं पर्यावरण हितैषी बना सकता हैं । नदियों को स्वच्छ एवं सुरक्षित रखने के लिए जल प्रदूषण को नियंत्रित करना ,नदियों के किनारे वृक्षारोपण करना ,नदियों में पॉलीथिन, प्लास्टिक कचरा एवं कूड़ा को प्रवाहित ना करना चाहिए। नदियां स्वच्छ,प्रदूषणविहीन, एवं स्वस्थ हैं तो मानवीय सभ्यता सु-रक्षित है। नागरिक समाज के लिए नदियां अमृतदायिनी और ऊर्जाद्रायिनी है।

(लेखक आरएसएस के गंगा समग्र के राष्ट्रीय संगठन मंत्री हैं।)

II शिवानन्द मिश्रा
स्तंभकार

भारत में प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने के तरीके

भारत जापान को पछाड़कर चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन चुका है।स्टॉक मार्केट रॉकेट बनकर उड़ रहा है। खबर सुकून वाली है लेकिन बस एक ही आंकड़ा है जो व्यथित करता है, जापान की आबादी 12 करोड़ है हमारी 150 करोड़। हर जापानी साल का 29 लाख रुपए कमा रहा है और हम 2.5 लाख भी नहीं। इसमें ये भी एक फैक्टर है कि जापान के सर्विस सेक्टर में काम करने वालो की डिमांड ज्यादा है जबकि लोग कम है। इस वजह से जॉब पैकेज अच्छे ही होते हैं लेकिन ये एक्सक्यूज तब काम करता जब हमारी भी प्रति व्यक्ति 12 लाख रुपए सलाना के आसपास होती।

औसत भारतीय परिवार में चार लोग होते हैं। उनमें से एक कमाता है मान लीजिए कि उसकी सैलरी 60 हजार भी है. घर के खर्चे तो ठीक चल रहे है लेकिन जब प्रति व्यक्ति आय की गणना होंगी तो इसे 15 हजार रुपए महीना ही गिना जाएगा और कुछ पश्चिमी लोग इसे पोवर्टी बोलेंगे।

भारत में परिवारो में रहने की परंपरा है. बच्चे नौकरी पर लगते हैं तो चाहते हैं कि पिता अब जॉब छोड़ दे और लाइफ एन्जॉय करें। इन सामाजिक मूल्यों के बीच प्रतिव्यक्ति आय सदा ही चुनौती रहेगी। परिवार का हर व्यक्ति कमाये ये पश्चिम का कॉन्सेप्ट है।

इसलिए हम खुद को अपने स्तर पर निखारे। भारत मे बड़े राज्यों मे सबसे ज्यादा प्रति व्यक्ति आय हरियाणा और गुजरात की है जो 4.5 लाख रुपए के आसपास है।

हम प्रयास करते है कि अगले 10 सालो में अन्य राज्य भी इस आंकड़े के करीब आ जाए. जाहिर है तब तक गुजरात हरियाणा और आगे भाग चुके होंगे, तब हम उस नंबर का पीछा करेंगे। इस तरह से काम करें तो दूर भविष्य में आर्थिक असमानता का मुद्दा हल हो सकता है।

इन आंकड़ों मे एक डरा देने वाला तथ्य यह है कि भारत के यदि टॉप 5% उद्योगपति ये देश छोड़ दे तो हमारी प्रतिव्यक्ति आय 1 लाख के इर्द गिर्द रह जायेगी जो भयावह है क्योंकि ये अफ़्रीकी देशो से नीचे हो जायेगी।

इसलिए जब कोई नेता पूंजीवाद के विरुद्ध बात करके सामजिक न्याय और समानता का ढ़ोल पीटे तो आप समझ जाइए कि आप किसी अंतर्राष्ट्रीय प्रोपोगंडा के शिकार हो रहे है क्योंकि वोट की राजनीति ने आज तक किसी को न्याय नहीं दिलाया है।

दूसरा डर जो मन मे होना चाहिए वह ये कि समाज नशे से जितना दूर हो, उतना ठीक। शराब का चलन आज भी कायम है. ये जहर है. 40-45 की आयु तक लोगो के लीवर गल रहे है। जब इस आयु का व्यक्ति मरता है तो वो परिवार को नहीं, देश को भी नुकसान देकर जा रहा है।

इस आयु मे समाज आशा करता है कि वह अब रिटर्न मे समाज को कुछ देगा फिर चाहे वो नई तकनीक हो, नया व्यापार हो, नया आविष्कार हो या नया विचार हो लेकिन शराब यहाँ आतंकवादी से कम किरदार नहीं निभाती।

तीसरी आवश्यक बात है कि महिलाओ को आगे आने दे क्योंकि वे जनसंख्या मे आधी है. इतिहास गवाह है रानी कैकयी युद्ध मे अपने पति दशरथ की सारथी बनी है. राज दरबारो मे महिलाओ ने शास्त्रार्थ मे पुरुषो को मात दी है। महिलाओ को घर मे कैद रखना हमारी परंपरा नहीं है। मुगल काल की मजबूरियों को आप प्रथा का नाम नहीं दे सकते,ये दासत्व का प्रतीक है, किसी स्थानीय शान का नहीं।बढ़ते तलाक, विवाह उपरांत संबंध और घर के आपसी झगड़ो के लिये नारी सशक्तिकरण उत्तरदायी नहीं है अपितु सामाजिक विचारो मे हो रहा परिवर्तन उसका दोषी है।

ये तीन वे बिंदु है जिन पर हमें, मंथन या कहे पुनः मूल्यांकन की आवश्यकता है। सरकार तो एक इंजन है ही लेकिन नागरिको को भी उस इंजन का अग्रदीप बनना होगा।

(लेखक के ये अपने विचार हैं।)

॥ संदीप सृजन
स्तंभकार

मोबाइल पर आरबीआई का संदेश परेशानी का सबब

भारतीय रिजर्व बैंक देश की वित्तीय प्रणाली का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है, जो मौद्रिक नीतियों को लागू करने, मुद्रा प्रबंधन और वित्तीय जागरूकता बढ़ाने जैसे कार्यों के लिए जाना जाता है। हाल के वर्षों में, आरबीआई ने जनता को साइबर धोखाधड़ी और वित्तीय अपराधों के प्रति जागरूक करने के लिए कई अभियान शुरू किए हैं। इनमें से एक अभियान में बॉलीवुड के महानायक अमिताभ बच्चन की आवाज का उपयोग किया गया, जिसका उद्देश्य लोगों को साइबर ठगी से बचाने के लिए जागरूक करना है।

जब भी हम किसी नंबर पर कॉल करते हैं, तो कॉल कनेक्ट होने से पहले अमिताभ बच्चन की आवाज में एक संदेश सुनाई देता है, जिसमें साइबर धोखाधड़ी से बचने की सलाह दी जाती है। संदेश में आमतौर पर यह बताया जाता है कि कोई भी बैंक या वित्तीय संस्थान व्यक्तिगत जानकारी जैसे ओटीपी, पासवर्ड, या बैंक खाता विवरण नहीं मांगता। साथ ही, यह लोगों को संदिग्ध लिंक्स पर क्लिक करने या अनजान कॉल्स का जवाब देने से मना करता है। यह संदेश विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध है, ताकि देश के हर हिस्से में लोग इसे समझ सकें। लेकिन, यह संदेश, जो मोबाइल फोनों पर कॉलर ट्यून के रूप में बजता है, कुछ लोगों के लिए परेशानी का कारण बन गया है। क्योंकि यह संदेश हर बार कॉल करने पर बार-बार सुनाई देता है, जिससे कुछ उपयोगकर्ताओं को असुविधा होने लगी। विशेष रूप से, वे लोग जो दिन में कई बार कॉल करते हैं, जैसे कि व्यवसायी, पेशेवर, या ग्राहक सेवा से जुड़े कर्मचारी, इस संदेश को सुनकर थकान और चिड़चिड़ापन महसूस करने लगे।

लोगों की सबसे बड़ी शिकायत यह है कि यह संदेश हर कॉल के साथ दोहराया जाता है। भले ही संदेश महत्वपूर्ण है, लेकिन इसे बार-बार सुनना कुछ लोगों के लिए कष्टप्रद हो सकता है। विशेष रूप से, आपातकालीन स्थिति में, जब कोई तुरंत कॉल कनेक्ट करना चाहता है, यह संदेश देरी का कारण बन सकता है। हालांकि संदेश संक्षिप्त है, फिर भी यह 10-15 सेकंड तक चलता है। बार-बार कॉल करने वालों के लिए यह समय भी काफी लंबा लगता है। जो कि उनके समय को बर्बाद करता है।

अमिताभ बच्चन की आवाज, जो सामान्य रूप से प्रेरक और आकर्षक मानी जाती है, इस संदर्भ में कुछ लोगों को चेतावनी देने वाली या डरावनी लग सकती है। बार-बार एक ही संदेश सुनने से कुछ उपयोगकर्ताओं में तनाव या बेचैनी की भावना उत्पन्न हो सकती है। कुछ मामलों में, कॉलर ट्यून के कारण कॉल कनेक्ट होने में देरी होती है, जिससे उपयोगकर्ताओं को लगता है कि उनकी कॉल ठीक से

काम नहीं कर रही। यह तकनीकी असुविधा उन लोगों के लिए विशेष रूप से परेशान करने वाली है जो कमजोर नेटवर्क क्षेत्रों में रहते हैं।

आरबीआई ने इस अभियान को लागू करने के लिए टेलीकॉम कंपनियों के साथ साझेदारी की है। जियो, एयरटेल, वोडाफोन-आइडिया जैसी प्रमुख टेलीकॉम कंपनियों ने इस संदेश को अपने नेटवर्क पर कॉलर ट्यून के रूप में लागू किया। हालांकि, टेलीकॉम कंपनियों ने उपयोगकताओं को इस संदेश को बंद करने का कोई विकल्प नहीं दिया है, जिससे असंतोष बढ़ा है। कुछ उपयोगकताओं ने सुझाव दिया है कि इस संदेश को वैकल्पिक किया जाए, ताकि जो लोग इसे सुनना न चाहें, वे इसे बंद कर सकें।

टेलीकॉम कंपनियों को उपयोगकताओं को यह विकल्प देना चाहिए कि वे इस संदेश को सुनना चाहते हैं या नहीं। एक साधारण सेटिंग के माध्यम से उपयोगकर्ता इसे अक्षम कर सकते हैं। हर कॉल पर संदेश बजाने के बजाय, इसे दिन में एक निश्चित संख्या तक सीमित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, दिन में पहली कुछ कॉलों पर ही यह संदेश बजे। संदेश को और संक्षिप्त किया जा सकता है ताकि यह उपयोगकर्ताओं के लिए कम कष्टप्रद हो। आरबीआई को जागरूकता बढ़ाने के लिए अन्य माध्यमों, जैसे सोशल मीडिया, टीवी विज्ञापन, या एसएमएस अभियानों पर भी ध्यान देना चाहिए। इससे कॉलर ट्यून पर निर्भरता कम होगी।

आरबीआई और टेलीकॉम कंपनियों को उपयोगकताओं की शिकायतों पर ध्यान देना चाहिए और इस अभियान को और उपयोगकर्ता-अनुकूल बनाने के लिए उपाय करने चाहिए। जागरूकता और सुविधा के बीच संतुलन बनाना महत्वपूर्ण है ताकि यह अभियान अपनी प्रभावशीलता बनाए रखे और साथ ही उपयोगकताओं की असुविधा को कम करे। अमिताभ बच्चन की आवाज, जो पहले पोलियो उन्मूलन जैसे अभियानों में चमत्कार कर चुकी है, इस अभियान में भी सकारात्मक बदलाव ला सकती है, बशर्ते इसे सही दिशा में लागू किया जाए।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार और स्तंभकार हैं)

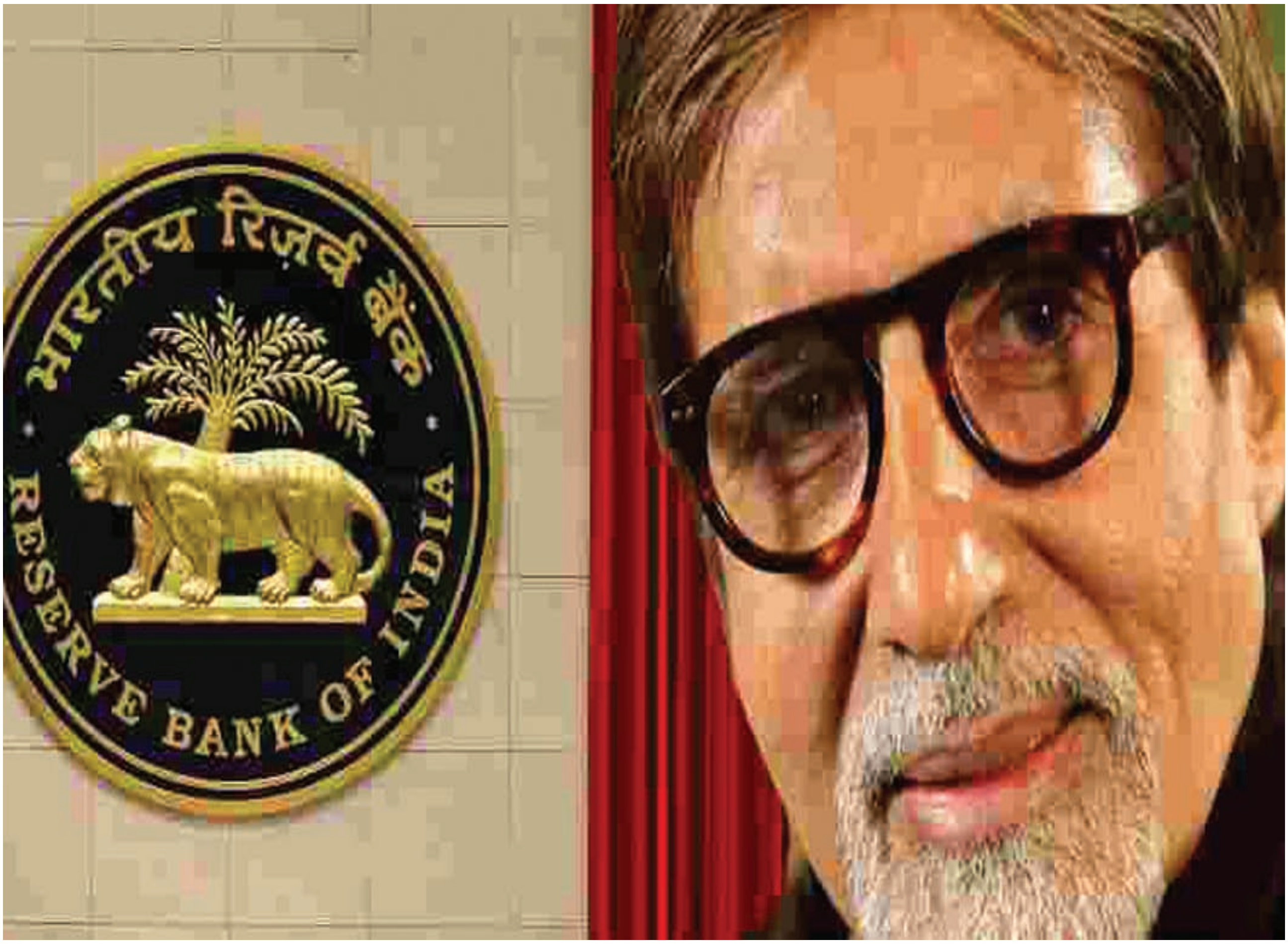

॥ राजेश जैन
स्तंभकार

दोस्ती की राह पर भारत-मालदीव

एक वक्त था जब भारत और मालदीव के रिश्तों में तनाव था, संदेह था और दूरी बढ़ रही थी लेकिन अब वही रिश्ते फिर से गरमाहट और सहयोग की दिशा में लौटते दिख रहे हैं।

साल 2023 के अंत में जब मोहम्मद मुइज्जू मालदीव के राष्ट्रपति बने तो नई दिल्ली के गलियारों में खलबली मच गई। वजह थी उनका चुनाव प्रचार–जिसमें 'इंडिया आउट' कैंपेन चला। भारतीय सैनिक वहां समुद्री निगरानी, मानवीय सहायता और आपदा प्रबंधन जैसे कार्यों में लगे थे लेकिन मुइज्जू की राष्ट्रवादी बयानबाजी ने उनकी मौजूदगी को मालदीव की संप्रभुता पर खतरे के तौर पर दिखाया और भारतीय सैनिकों को देश से बाहर निकालने की बात की गई। इसके बाद माले-दिल्ली के रिश्ते तनातनी की राह पर चल पड़े।

ऐसे बढ़ी रिश्तों में खटास

मुइज्जू ने राष्ट्रपति बनने के बाद पहली आधिकारिक यात्रा भारत की जगह तुर्की की की। इसके साथ ही उन्होंने भारत के साथ हाइड्रोग्राफी समझौता नवीनीकृत करने से इंकार कर दिया। उन्होंने एक चीनी शोध पोत को मालदीव के जलक्षेत्र में प्रवेश की अनुमति दी, जिससे भारत की चिंता और बढ़ गई। इन घटनाओं के बीच मालदीव के कुछ नेताओं ने प्रधानमंत्री मोदी की पर्यटन को बढ़ावा देने वाली नीति पर टिप्पणी कर दी, जिससे दोनों देशों के रिश्तों में खटास और बढ़ गई।

फिर भी भारत का परिपक्व रुझान

सही है मालदीव ने पिछले कुछ वर्षों में चीन की ओर झुकाव दिखाया है लेकिन सच्चाई यह भी है कि भूगोल नहीं बदला जा सकता। भारत और मालदीव के बीच हिंद महासागर की साझी सीमाएं हैं, साझा हित हैं और ऐतिहासिक संबंध भी। इसलिए भले ही चीन का असर बढ़े, मालदीव भारत को दरकिनार नहीं कर सकता। क्षेत्रीय स्थिरता के लिए भारत की नीति, सागर यानी सिक्योरिटी एंड ग्रोथ फॉर आल इन द रीजन, के तहत छोटे द्वीपीय देशों को साथ लेकर चलने की है।

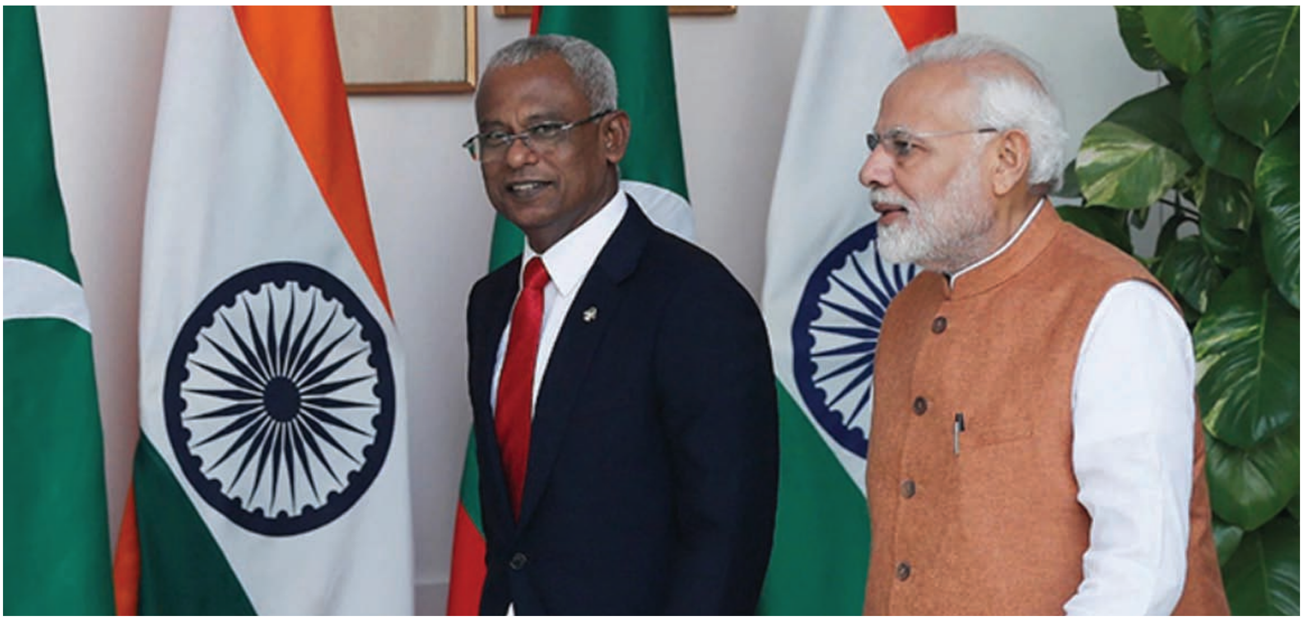

बैक चैनल डिप्लोमेसी ने किया कमाल

ऐसे में रिश्तों में सुधार के लिए भारत ने सार्वजनिक प्रतिक्रिया देने की बजाय बैकचैनल डिप्लोमेसी का रास्ता अपनाया। चुपचाप बातचीत हुई और दोनों देश एक ऐसे समझौते पर पहुंचे, जिसमें भारतीय सैनिकों को तकनीकी विशेषज्ञ भारतीय नागरिकों से बदल दिया गया। इससे मुइज्जू की जनता को भी जवाब मिला और भारत को भी राहत। मुइज्जू जून 2024 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के तीसरे कार्यकाल के शपथ ग्रहण समारोह में शामिल हुए। फिर अक्टूबर में उन्होंने भारत की आधिकारिक यात्रा की। भारत ने 2024-25 के बजट में मालदीव के लिए ₹400 करोड़ की विकास सहायता की घोषणा की—जो पिछले साल के बराबर थी।

मार्च 2024 में राष्ट्रपति मुइज्जू ने एक इंटरव्यू में कहा कि भारत मालदीव का सबसे करीबी सहयोगी है। उन्होंने कभी ऐसा कोई कदम नहीं उठाया जो भारत-मालदीव रिश्तों को नुकसान पहुंचाए। मुइज्जू ने भारत से आर्थिक मदद की उम्मीद जताई। भारत ने भी सकारात्मक संकेत दिए। उसने मालदीव को दिए गए कर्ज की पुनर्भुगतान शर्तों को आसान किया और ₹50 मिलियन डॉलर के ट्रेजरी बिल की परिपक्वता अवधि एक साल और बढ़ा दी। यह आर्थिक सहयोग ऐसे समय पर आया जब मालदीव आर्थिक संकट से जूझ रहा था।

ऑफ-सीजन में मालदीव के पर्यटन उद्योग को जिंदा रखते हैं भारतीय

मालदीव की अर्थव्यवस्था पर्यटन पर टिकी है। खासकर भारतीय पर्यटक उन महीनों में आते हैं जब पश्चिमी देशों से पर्यटक नहीं आते। इस कारण भारतीय पर्यटक ऑफ-सीजन में भी मालदीव के पर्यटन उद्योग को जिंदा रखते हैं। मालदीव मार्केटिंग एंड पब्लिक रिलेशंस कॉर्पोरेशन और भारत में मालदीव के उच्चायुक्त बालासुब्रमण्यम के बीच हालिया बैठक में इस बात पर चर्चा हुई कि कैसे भारतीय पर्यटकों की संख्या को और बढ़ाया जाए। इससे दोनों देशों को आर्थिक रूप से फायदा होगा।

मालदीव मोदी जाएंगे !

खबर है कि प्रधानमंत्री मोदी 26 जुलाई को मालदीव के स्वतंत्रता दिवस समारोह में शामिल हो सकते हैं। मालदीव के विदेश मंत्री अब्दुल्ला खलील ने हाल ही में भारत दौरे के दौरान मुइज्जू की ओर से मोदी को यह निमंत्रण फिर से दोहराया। अगर मोदी जाते हैं तो यह उनकी मुइज्जू शासनकाल में पहली मालदीव यात्रा होगी। यह कदम संबंधों को और मजबूती देगा।

भरोसे की नई सुबह

भारत और मालदीव के संबंध अब धीरे-धीरे संदेह की रात से निकलकर विश्वास की सुबह की ओर बढ़ रहे हैं। ये रिश्ता भूगोल, अर्थशास्त्र और आपसी सहयोग की जरूरतों पर आधारित है। यह दिखाता है कि कूटनीति में कोई दरवाजा कभी पूरी तरह बंद नहीं होता। मुइज्जू के कार्यकाल में रिश्तों ने कई रंग देखे—तनाव, दूरी, फिर मेल और अब सहयोग। अब जो दिख रहा है, वो है एक नई शुरूआत का संकेत। भारत और मालदीव, दोनों अपने हितों को समझते हैं और अब एक साथ आगे बढ़ने को तैयार हैं।

॥ पुष्परंजन
वरिष्ठ स्तंभकार

लोकतंत्र को रौंदता ट्रंप प्रशासन

आप ट्रंप के पूर्वजों के बारे में पता कीजिये। वो खांटी अमेरिकन्स नहीं हैं। फ्रेडरिक ट्रम्प, डोनाल्ड ट्रम्प के दादा थे। जर्मनी के राइनलैंड वाले इलाके के काल्स्टेड्ट में जन्मे और पले-बढ़े, जो उस समय बावेरिया का हिस्सा था। जर्मन हैं, तो फ्रेडरिक ट्रम्प को सैन्य सेवा में अनिवार्य रूप से कुछ वर्षों के लिए जाना होता। इससे भागना ही फ्रेडरिक ट्रम्प ने तय किया। फ्रेडरिक ट्रम्प किशोरावस्था में नाई का काम करते थे। 7 अक्तूबर, 1885 को अमेरिका के लिए वन वे टिकट लेकर जहाज पर चढ़े, और फिर मुड़ कर नहीं देखा। वह न्यूयॉर्क पहुंचे, जहां उन्होंने अंततः अपना परिवार बसाया और एक रियल एस्टेट व्यवसाय में कर्मचारी से कारोबारी बन गए। फ्रेडरिक ट्रम्प के बेटे और पोते ने इस जर्मन विरासत को पूरी तरह से नकार दिया, इसके बजाय दावा किया कि उनके दादा की जड़ें स्कैंडिनेविया में उत्तर की ओर थीं। ट्रम्प ने अपनी सह-लिखित पुस्तक 'द आर्ट ऑफ द डील' में दावा किया, 'मैं एक बच्चे के रूप में स्वीडन से यहां आया था। पिता जर्मन, मां स्कॉटिश।' इमिग्रैंट बैकग्राउंड वाले वही ट्रम्प, आप्रवासियों के पीछे हाथ धोकर पड़े हैं।

लॉस एंजेलिस में इमिग्रेशन छापों को लेकर हिंसक विरोध हुआ है। लोगों को काबू करने के वास्ते 2,100 नेशनल गार्ड को लॉस एंजेलिस में तैनात किया गया है। इसके अलावा 700 मरीन भेजे गए हैं। अब यहां नेशनल गार्ड की संख्या चार हजार हो गई है। इससे स्थानीय अधिकारियों और कैलिफोर्निया के गवर्नर गेविन न्यूसम की चिंता और बढ़ गई है। न्यूसम पहले ही कह चुके हैं कि ट्रंप इस आग को और भड़का रहे हैं, और वह यही चाहते थे। साफ लगता है, आर्थिक मोर्चे पर फेल ट्रम्प देश का ध्यान आव्रजन नीतियों में उलझाए रखना चाहते हैं। लॉस एंजेलिस में हालात बेकाबू हैं। ट्रम्प के बारे में यही कहा जा रहा है, कि उनका व्यवहार तानाशाहों वाला हो चुका है।

ट्रम्प के जीवनी लेखक टिम ओ ब्रायन ने कहा, 'बदला वह ऑक्सीजन है, जो उन्हें बचाए रखती है।' और उन्होंने अपने इर्द-गिर्द ऐसे छोटे-मोटे लोगों को रखा है जो उनकी खूब चापलूसी करते हैं। मसखरे जैसे दिखने वाले लोग कैबिनेट बैठकों में उनका शौर्य बखान करते हैं। फेडरल कम्युनिकेशंस कमीशन के चेयरमैन ब्रेंडन कैर ने तो अपने कॉलर पर सुनहरे रंग का ट्रंप का सिर भी लटका रखा है। ठीक वैसे ही जैसे माओवादी करते थे। अराजकता के सम्राट ट्रंप का जब टैरिफ युद्ध से ध्यान हटता है, वो आप्रवासियों को भगाने की मुहिम में लग जाते हैं।

अमेरिका को गौर से देखें तो यह देश आबाद ही हुआ बाहर से आये लोगों से। राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी द्वारा लिखी गई एक पुस्तक का शीर्षक ही है, 'ए नेशन ऑफ इमिग्रेंट्स'। जब उन्होंने यह किताब लिखी, तब वो सीनेटर थे। इस पुस्तक में औपनिवेशिक अमेरिका से लेकर अब तक के आप्रवासन का इतिहास, और अमेरिका में आप्रवासन कानून को उदार बनाने के प्रस्ताव शामिल हैं। 1965 से पहले, अमेरिकी आव्रजन कानून उत्तरी और पश्चिमी यूरोप के आप्रवासियों के हित में था, इनकी कोशिश थी, कि एशिया से आप्रवास को प्रतिबंधित किये रखें। 1965 के आव्रजन और राष्ट्रीयता अधिनियम ने एशिया और लैटिन अमेरिका से आप्रवास के दरवाजे खोल दिए। वर्ष 1990 के आव्रजन अधिनियम ने कानूनी आव्रजन को और भी शिथिल किया, जिससे बाकी देशों के अनिवासियों को कानूनी रूप से अमेरिका में प्रवेश करने की अनुमति मिल गई।

34.7 करोड़ की आबादी वाले अमेरिका में विदेश से आये लोगों की संख्या, 2023 में उपलब्ध रिकॉर्ड के अनुसार, चार करोड़ 78 लाख तक पहुंच गई, जो 2022 के मुकाबले, 16 लाख अधिक है। यह 2000 के बाद से 20 से अधिक वर्षों में सबसे बड़ी जनसंख्या वृद्धि है। वर्ष 1970 में, अमेरिका में रहने वाले आप्रवासियों की संख्या आज की तुलना में

लगभग पांचवां हिस्सा थी। 1965 में कांग्रेस द्वारा अमेरिकी आव्रजन कानूनों में बदलाव किए जाने के बाद इस जनसंख्या की वृद्धि में तेजी आई। ठीक से देखा जाये, तो ओरिजिनल अमेरिकी केवल दस फीसद हैं। आज अमेरिका में अनिवासी 1910 के बाद से सबसे ज्यादा हैं, लेकिन 1890 के 14.8 फीसद रिकॉर्ड से कम मानकर चलिए।

पीईडब्ल्यू रिसर्च सेंटर के आंकड़े बताते हैं, 'अमेरिका में मेक्सिको से आये आप्रवासी सबसे अधिक हैं। 2022 में यू.एस. में रहने वाले लगभग एक करोड़ छह लाख आप्रवासी वहीं पैदा हुए थे, जो टोटल यू.एस. आप्रवासियों का 23 प्रतिशत है। तीन साल पहले, अमेरिका में अनिवासियों का सबसे बड़ा समूह इंडो-अमेरिकन्स (6 प्रतिशत), चीनी (5 प्रतिशत), फिलीपीनी (4 प्रतिशत) और अल साल्वाडोर से आने वाले क्रमशः 3 फीसद बताये गए थे। लैटिन अमेरिका (27 प्रतिशत), जिसमें मेक्सिको शामिल नहीं है, लेकिन कैरिबियन (10 प्रतिशत), मध्य अमेरिका (9 प्रतिशत) और दक्षिण अमेरिका (9 प्रतिशत) शामिल हैं। यूरोप, कनाडा और अन्य उत्तरी अमेरिका 12 प्रतिशत, सब सहारा अफ्रीका के (5 प्रतिशत) और मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका (4 प्रतिशत) अनिवासी अमेरिका में बसते हैं।'

ट्रंप प्रशासन, जिसने जनवरी 2025 में अवैध प्रवासियों को देश से बाहर निकालने के नाम पर वोट बटोरे, उसने बार -बार कसम खाई है, कि अमेरिका को 'अवैध प्रवासियों से मुक्त' कर दिया जाएगा। ट्रम्प की प्रवासन विरोधी नीतियों का दुष्प्रभाव यूरोप में पड़ने लगा है। फिलहाल लॉस एंजिल्स में नेशनल गार्ड की संख्या चार हजार हो गई है। इससे स्थानीय अधिकारियों और कैलिफोर्निया के गवर्नर गेविन न्यूसम की चिंता और बढ़ गई है। वैसे, यह पहला मौका है जब नेशनल गार्ड को गवर्नर की सहमति के बिना किसी राज्य में भेजा गया है। गवर्नर न्यूसम ने इसे 'सत्ता का बेशर्मी से दुरुपयोग' कहा और ऑन द रिकार्ड कहा कि राष्ट्रपति 'एक ज्वलनशील स्थिति' को भड़का रहे हैं।

लॉस एंजिल्स (एलए) का ताजा अपडेट यह है, कि वहां कर्फ्यू लगाने के तुरंत बाद 'बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियां' की गई हैं। लूटपाट अराजकता फैलाने के आरोप में 200 लोगों को मंगलवार से पहले ही हिरासत में लिया जा चुका है। एलए में अराजक माहौल का असर न्यूयॉर्क सहित अन्य शहरों पर भी पड़ा है। वहां भी ट्रम्प की नीतियों के विरोध में प्रदर्शन हुए हैं। गिरफ्तारियां भी हुई हैं। ट्रम्प ने 4,000 नेशनल गार्ड और 700 मरीन को भेजने के अपने फैसले का बचाव करते हुए कहा, कि यह कदम 'एलए' जैसे शहर को 'किसी विदेशी दुश्मन के कब्जा किए जाने' से बचाने के लिए था।

डेमोक्रेट जिन्हें कभी-कभी वामपंथी, उदारवादी या प्रगतिशील भी कहा जाता है, ट्रंप की आव्रजन विरोधी नीतियों का कैसे मुकाबला करते हैं? बड़ा सवाल है। ट्रम्प की रिपब्लिकन पार्टी का सिम्बल है 'हाथी'। यह हाथी मतवाला होकर लोकतंत्र को रौंद रहा है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। ये उनके अपने विचार हैं।)

जन्मदिन (16 जून) पर विशेष

समकालीन चेतना के सुप्रतिष्ठित कवि हरिबल्लभ सिंह 'आरसी'

प्रो. (डॉ.) सत्येन्द्र अरूण
वरिष्ठ साहित्यकार

वैदुष्य विमंडित व्यक्तित्व में स्वामी और दो दर्जन आलोकमयी काव्यकृतियों के प्राणवंत प्रणेता एवं लोक को आलोक देकर सृजन की माननीय सार्थकता सिद्ध करने की लालसा रखने वाले कवि श्रेष्ठ हरिबल्लभ सिंह 'आरसी' आधुनिक काव्यधारा के सशक्त एवं महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। समाज की धड़कनें कविता में और कविता की घड़कने समाज में सुनने के आग्रह ने उन्हें जीवन की समग्रता का कवि बना दिया है। इनकी कविता समकालीन घटनाओं, स्थितियों और बदलावों का काव्यात्मक आलेख होने के साथ ही अपने में अंतिर्निहत शाश्वत मूल्यों की सांकेतिक अभिव्यक्ति के कारण चिरन्तन भी है। जाहिर है कि कोई भी बड़ा रचनाकार न तो अपने दिक्-काल से आंखें मूंद कर रचना में प्रवृत्त होता है और न ही रचना की कालजयता से निरपेक्ष होता है। यहाँ तक कि 'स्वान्तः सुखाय' रचनाओं में भी न तो युगबोध की अनुपस्थिति संभव है और न ही युगातीत होने की आकांक्षा की वर्जना। सच तो यह है कि अपने समकाल से आबद्ध रचना की सार्थकता भी उसके देश कालातीत हो जाने में है। यही कारण है कि आरसीजी की कविता सामयिक और समयातीत के दोनों ध्रुवों के बीच निरंतर आवाजाही करती है।

कविवर आरसीजी की कविताओं को पढ़ना एक प्रतिकर अनुभव है। उनकी छोटी-छोटी अर्थगर्भित कविताओं की तासीर अलग है और कहने का अंदाज भी। उनके पास सहज मौलिकता है और उनकी कविताओं में भी हमारे बदलते हुए समय के अनुभवों की एक नयी जमीन है। आरसीजी मूलतः समाज और जनता से जुड़े हुए कवि हैं। वे वायंवीय पथगमिता के कवि नहीं हैं और न ही कल्पना कं पंखों पर नभचारी होने में उनका कोई विश्वास है। उनकी कविताओं के पैर जमीन पर हैं और दृष्टि जीवन जगत के विविध आयामों पर टिकी है। इसलिए उसमें पाठकों को सहज भाव से आकर्षित करने की क्षमता है। यहां यह ध्यातव्य है कि आरसीजी की कविता यथास्थिति का बोध कराकर अपने कर्त्तव्य की पूर्णता नहीं मान लेती बल्कि साहस, संकल्प, संघर्ष और

विरोध के जागरण-भाव से युगोपरि तथा नव निर्माण का विधान भी रचती है यही उनका काव्य-प्रयोजन भी है। उनकी जीवन यात्रा का यही पाथेय है जो उन्हें जनधर्मी और जीवनधर्मी कवि के रूप में प्रतिष्ठित करता है ।

प्रगतिवाद से लेकर प्रयोगवाद और नयी कविताओं के विभिन्न काव्यान्दोलनों के काल में रचनारत होते हुए भी इन आंदोलनों से सर्वथा अलग राह पर चलने वाले श्री हरिबल्लभ सिंह 'आरसी' की कविता उस रस्सी की तरह है जिसमें कवि ने हर बिखरे अनुभव को रेशे की तरह समेट लिया है। अतः उनकी कविता को किसी वाद विशेष के फॉर्म में कस-कर उसका निहितार्थ निकालना कथमपि उचित नहीं होगा। सीधी एवं सच्ची बात तो यह है कि आरसीजी संस्कारतः मानवतावादी चेतना के उर्जस्वित कवि हैं। 'आत्मवत सर्वभूतेषु' 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और 'सर्वेभवन्तु सुखिनः' जैसे आर्य वचनों से निःसृत रूपहली ज्योत्स्ना से जन-मन को मांज एक ऐसे समाज को देखने के अभिलाषी हैं जिसमें स्वार्थ, शोषण, आतंक, अत्याचार, भ्रष्टाचार, लूट, हत्या, मिथ्याचरण आदि मानवता के आंचल पर कालिख सदृश लगने वाला अमानवीय तत्वों का नामोनिशान न रहे । इसलिए कवि युचा-वर्ग के शिराओं में उत्तेजना की आग उड़ेलते हुए कहता है :-

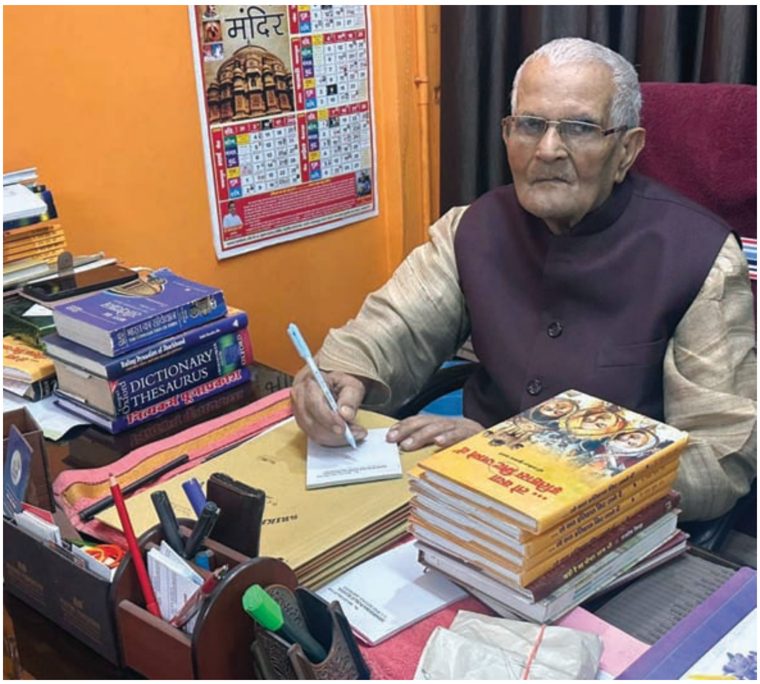

'उठो प्रजातंत्र की चुनौतियों को स्वीकार करो
एकजुट हो नैतिक मूल्यों को प्रतिष्ठापित करो
भ्रष्टाचार जग से मिटाओ, देश बचाओ
विश्व के सबसे बड़े प्रजातंत्र को मंझधार से निकालो
उठो युवाओ, उठो-उठो ।'

सारतः आरसीजी के संवेदन संसार में यथार्थ अपने वास्तविक रूप में दृश्यमान है। उसमें सम सामयिकता का स्पंदन है। विसंगतियों और विडंबनाओं का मंथन है। परिवेश की मूल्यहीनता से उपजा पीड़ा–बोध है। संत्रास है, भय है और आशंका एवं आक्रोश है। आरसीजी शतायु होकर साहित्य और समाज में कीर्तिमान स्थापित करें, यह मेरी एकांत कामना है।

समरस चिंतन के अभाव में सत्ता के गोमुख पर विराजमान व्यक्ति शक्ति के संपूर्ण जल को स्वयं के अभिषेक के लिए संचित और सुरक्षित रखना चाहता है। ऐसी स्थिति में सामान्य मनुष्य का क्या होगा? मानवीयता के लिए समर्पित मूर्धन्य कवि आरसीजी की सबसे बड़ी चिन्ता यही है। यह कैसी विडंबना है कि सत्ता का मुकुट धारण करते ही कोई नेता मानवीय मूल्यों को पददलित और धूलधूसरित करने के लिए कमर कस लेता है। सत्ता के रथ को अमानवीयता के पद पर हांव वाले नेताओं के चारित्रिक पतन को देखकर कवि के दिमाग में आक्रोश के शोले खदकने लगते है सिंह की तरह दहाड़ते हुए वह इन भ्रष्ट आचरण पर आक्रमण करते हैं :-

‘निष्ठा उठती जाती है सांसद के आचरणों से
विश्वास मिटता जाता है विधि विधानों से
संभव है अपराधी का कब्जा संसद पर होगा
मिट जाएगा संविधान, संसद लोप हो जाएगा
लोकतंत्र में मात्र नेता ही लूटेगा
कर्मचारी अपनी किस्मत पर रोयेगा
असली समाजवाद तभी आयेगा
जब सब मिलकर देश को लूटेगा ।’

राष्ट्र की धमनियों पर दांत गड़ाकर आम जनता का रक्त पीने वाले लूटेरे नेताओं पर आक्रोष की छड़ी बरसाते हुए कवि दो टूक शब्दों में पूछता है :-

‘जवाब दो कल तक हम
आजादी खोजते रहेंगे
भूखे पेट आजादी की
कुबार्नी कब तक देते रहेंगे
शोषण और भ्रष्टाचार के शिकार
कब तक हम होते रहेंगे
शासन की कुर्सी पर कब तक
लुटे बैठे रहेंगे।’

आरसीजी भारतीय संस्कृति के उद्‌गाता कवि और प्रखर प्रवक्ता है। वे शुद्ध भारतीय ढंग के आदमी और रचनाकार हैं। उन्हें अपनी माटी, इतिहास, दर्शन, परंपरा, संस्कृति, भाषा और सभ्यता से सतिशय प्यार है। आज चिंता की बात यह है कि भूमंडलीकरण और बाजारवाद की नकेल में पड़कर भारतवर्ष पश्चिम दिशा से उगने वाले सूरज की ओर अपनी आंखें टिकाए हुए है। अपनी संस्कृति अस्मिता, महान जीवन-मूल्यों, सभ्यता-संस्कार और विचारधारा से आंखें मूंदकर पश्चिम की ओर कृपा पात्र बनने पर आरसीजी को जो पीड़ा होती है उसकी अभिव्यक्ति उनकी कई कविताओं में हैं। उदाहरणस्वरूप अग्रांकित पंक्तियां दृष्टव्य हैं :-

‘भारत की सभ्यता संस्कृति पुकारती
हमला है पश्चिम से आज फिर
देश उसी रंग में आज रंग गया है फिर
शेष नहीं है कोई पहचान आज अपनी ।’

चांदी के खनकते सिक्कों के लिए अपने चरित्र का सौदा नहीं करनेवाली भारतीय नारी आज पाश्चात्य संस्कृति के सरोवर में प्रसन्न मन से नहा कर गौरवान्वित हो रही है। भारतीय नारी के आदर्श और चारित्रिक सौंदर्य की धज्जियां उड़ा कर पाश्चात्य संस्कृति के सांचे में ढली नारियों को देखकर कवि का दर्द छलक पड़ता है :-

‘अब कृष्ण को दौड़ना नहीं पड़ेगा
द्रौपदी की लाज बचाने
वह तो स्वयं फैशन शो में
अर्धनग्न होकर घूमती है
अब चीर हरण कराने वाला
दूर्योधन फैशन शो का प्रहरी है।’

अपने समकालीनों में आरसीजी में गांधी और जयप्रकाश नारायण के प्रति अपार श्रद्धा और आदर का भाव है तो इसलिए कि इनमें भारतीयता अपनी संपूर्ण आभा के साथ विद्यमान रही है। गांधी की आलोक वृष्टि में सर्वाधिक भींगे है आरसीजी, जिसका परिणाम उनकी गांधी पर कविता है ।सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह आदि महनीय मूल्यों से युक्त गांधी-विचार-दर्शन स्वतंत्रता के संघर्ष काल में जितना आभावान था उतना वह आज भले ही न हो, मगर उसकी चमक सदियों तक लोगों का पथ प्रशस्त करती रहेगी। आरसीजी का स्थिर मत है कि आज भी गांधी की विचारधारा देश की भयावह समस्याओं का हल ढूंढने में समर्थ सिद्ध होगी। इसलिए वे गांधी के सपनों को पूरा करने का आह्वान करते हैं :-

‘गांधी गए छोड़ कर अपना
काम अधूरा राम राज्य का
सत्ता भोगी ने राम राज्य को दफन किया है
वही बोलता सत्य-अहिंसा व्रत हमारा
लो पीड़ित-पिछड़ों की सेवा का संकल्प
गांधीवाद का यही है मूलमंत्र
सबको रोटी शिक्षा होगी
तब घर-घर में खुशहाली होगी।’

सारतः आरसीजी के संवेदन संसार में यथार्थ अपने वास्तविक रूप में दृश्यमान है। उसमें सम सामयिकता का स्पंदन है। विसंगतियों और विडंबनाओं का मंथन है। परिवेश की मूल्यहीनता से उपजा पीड़ा-बोध है। संत्रास है, भय है और आशंका एवं आक्रोश है।

आरसीजी शतायु होकर साहित्य और समाज में कीर्तिमान स्थापित करें, यह मेरी एकांत कामना है।

‘कुलपति’ से ‘कुलगुरु’

डॉ. सुधीर कुमार

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) की कुलपति का अपने पदनाम को ‘कुलपति’ से बदलकर ‘कुलगुरु’ करने का निर्णय शिक्षा जगत में एक विचारणीय पहल है। यह सिर्फ एक शब्द का बदलाव नहीं, बल्कि इसके पीछे भारतीय ज्ञान परंपरा, शैक्षणिक मूल्यों और गुरु-शिष्य परंपरा को पुनः स्थापित करने की सोच निहित है। इस कदम पर व्यापक चिंतन की आवश्यकता है।

‘कुलपति’ शब्द ‘कुल’ (परिवार या समुदाय) और ‘पति’ (स्वामी या मुखिया) से मिलकर बना है। यह प्रशासनिक अधिकार और स्वामित्व का बोध कराता है। इसमें सम्मान और अधिकार का भाव तो है, लेकिन शिक्षा और मार्गदर्शन का उतना नहीं। ‘कुलगुरु’ शब्द का मूल संस्कृत में है, और यह ‘कुल’ (परिवार/समूह) और ‘गुरु’ (शिक्षक/मार्गदर्शक) से मिलकर बना है। यह शब्द न केवल प्रशासनिक प्रमुखता को दर्शाता है, बल्कि इससे कहीं अधिक, यह ज्ञान, मार्गदर्शन, नैतिक नेतृत्व और छात्रों के प्रति पितृतुल्य स्नेह की भावना को भी समाहित करता है। ‘कुलगुरु’ वह होता है जो अपने कुल के सदस्यों को ज्ञान के मार्ग पर ले जाता है, उनके आध्यात्मिक और बौद्धिक विकास में सहायता करता है। एक विश्वविद्यालय केवल डिग्रियां बांटने वाली संस्था नहीं, बल्कि ज्ञान का मंदिर और छात्रों के व्यक्तित्व निर्माण का केंद्र होता है, और शिष्य -परंपरा के प्रति गहन प्रतिबद्धता को भी समाहित करता है।

स्पष्ट है कि 'गुरु' शब्द में जो सम्मान, त्याग, ज्ञान और परोपकार का भाव निहित है, वह 'पति' शब्द में नहीं। एक विश्वविद्यालय का प्रमुख केवल उसका प्रशासक नहीं होना चाहिए, बल्कि उसका 'गुरु' होना चाहिए, जो छात्रों, शिक्षकों और कर्मचारियों को ज्ञान, नैतिकता और समग्र विकास के मार्ग पर प्रेरित करे।

निःसंदेह, विश्वविद्यालयों के प्रमुखों के लिए ह्यकुलगुरुह्ण की उपाधि 'कुलपति' से कहीं अधिक उपयुक्त और श्रेष्ठ है। यह एक प्रतीकात्मक बदलाव हो सकता है, लेकिन इसका गहरा मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक प्रभाव पड़ेगा। यह विश्वविद्यालय के प्रमुख को केवल एक प्रबंधक नहीं, बल्कि एक मार्गदर्शक, एक संरक्षक और एक ज्ञानी व्यक्ति के रूप में स्थापित करेगा जो अपने 'कुल' के सभी सदस्यों के प्रति जिम्मेदार है। हां, यह बदलाव रातों-रात नहीं होगा और इसके लिए गहन विचार-विमर्श और सर्वसम्मति की आवश्यकता होगी।

देश के विश्वविद्यालय को इस बदलाव पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। यह केवल एक भाषाई बदलाव नहीं, बल्कि एक वैचारिक बदलाव है जो भारतीय शिक्षा प्रणाली को उसकी मूल भावना से जोड़ सकता है। अन्य विश्वविद्यालयों का 'कुलपति' के स्थान पर 'कुलगुरु' की उपाधि अपनाना एक सकारात्मक और दूरगामी कदम होगा। यह बदलाव विश्वविद्यालय के प्रमुख की भूमिका को केवल प्रशासनिक मुखिया से ऊपर उठाकर एक नैतिक और शैक्षणिक मार्गदर्शक के रूप में स्थापित करेगा, जिससे भारतीय गुरु-शिष्य परंपरा का पुनरुद्धार होगा। यह हमारी संस्कृति और मूल्यों के प्रति सम्मान का प्रतीक भी बनेगा।

हालांकि, यह भी समझना आवश्यक है कि केवल पदनाम बदलने से रातों-रात बदलाव नहीं आ जाएगा। 'कुलगुरु' की उपाधि को सार्थक बनाने के लिए कुलपति को वास्तव में गुरु की भूमिका निभानी होगी- छात्रों के साथ संवाद स्थापित करना, उनकी समस्याओं को समझना, उन्हें अकादमिक और व्यक्तिगत रूप से मार्गदर्शन करना, और विश्वविद्यालय के शैक्षणिक उत्थान के लिए प्रतिबद्ध रहना। यह बदलाव एक प्रतीकात्मक शुरूआत है, जिसका वास्तविक प्रभाव तब दिखेगा जब यह भावना विश्वविद्यालय के संपूर्ण कार्यप्रणाली में प्रतिबिंबित होगी।

भारतीय परंपरा में गुरु का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। गुरु केवल पाठ्यक्रम नहीं पढ़ाता, बल्कि वह छात्रों को जीवन के मूल्यों, नैतिकता और सही-गलत का ज्ञान भी देता है। 'कुलगुरु' के रूप में, कुलपति की भूमिका केवल विश्वविद्यालय के प्रशासनिक कार्यों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह छात्रों और शिक्षकों के लिए एक प्रेरणास्रोत, एक संरक्षक और एक ज्ञानी मार्गदर्शक भी बन जाता है। यह बदलाव एक ऐसे माहौल को बढ़ावा दे सकता है जहां छात्र अपने 'कुलगुरु' के प्रति अधिक सम्मान और विश्वास महसूस करें, जिससे एक स्वस्थ और सहयोगात्मक शैक्षणिक वातावरण का निर्माण होगा।

निःसंदेह, 'कुलगुरु' का पदनाम हमें याद दिलाएगा कि विश्वविद्यालय का मुखिया केवल एक प्रशासक नहीं, बल्कि एक ऐसा व्यक्ति है जो ज्ञान के प्रकाश से छात्रों के जीवन को रोशन करता है। यह एक ऐसा परिवर्तन है जो न केवल भारतीय शिक्षा प्रणाली को मजबूत करेगा, बल्कि उसे उसकी गौरवशाली परंपरा से भी जोड़ेगा। जेएनयू ने एक सराहनीय शुरूआत की है, और अब अन्य विश्वविद्यालयों की बारी है कि वे इस महत्वपूर्ण विचार को अपनाकर शिक्षा के क्षेत्र में एक नए युग की शुरूआत करें।

(लेखक के ये अपने विचार हैं। लेखक कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के विधि विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं।)

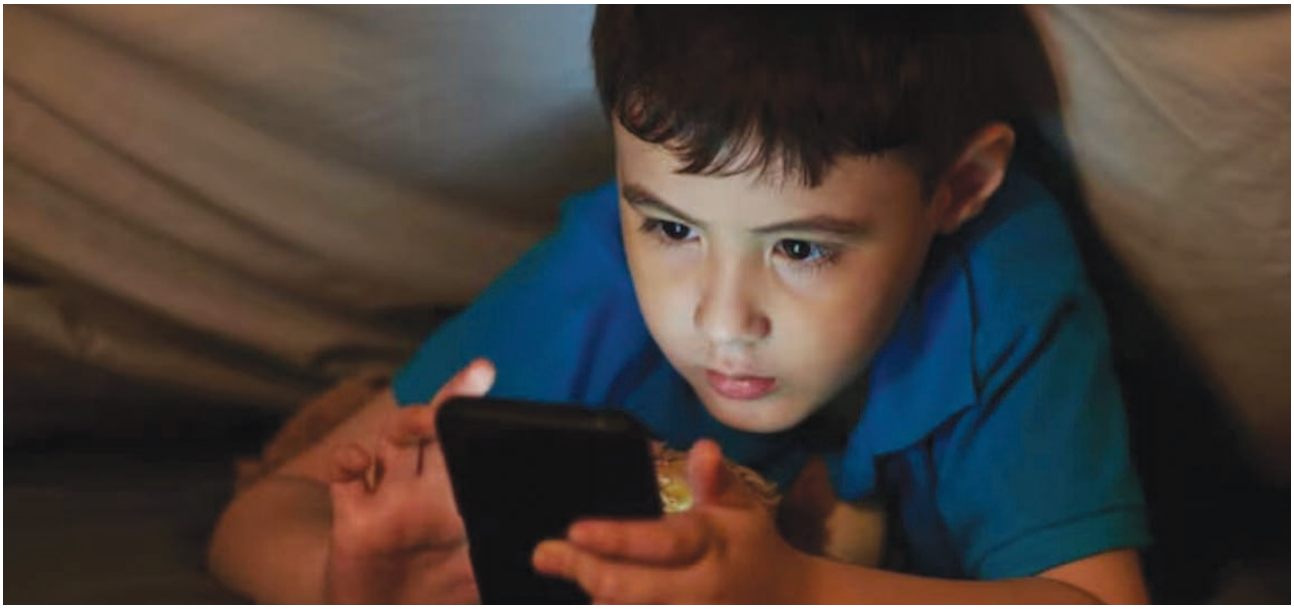

सोशल मीडिया बच्चों को हिंसक एवं बीमार बना रहा है

॥ ललित गर्ग
वरिष्ठ स्तंभकार

सोशल मीडिया के बढ़ते उपयोग से बच्चों का बचपन न केवल प्रभावित हो रहा है, बल्कि बीमार, हिंसक एवं आपराधिक भी हो रहा है। यह चिंताजनक एवं चुनौतीपूर्ण है। यह बच्चों को समय के प्रति, परिवार एव सामाजिक कौशल के प्रति और मानसिक स्वास्थ्य के प्रति नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है। सोशल मीडिया ने बच्चों से बाल-सुलभ क्रीड़ाएं ही नहीं छीनी बल्कि दादी-नानी की कहानियों से भी वंचित कर दिया है। कुछ विशेषज्ञ इस बात से चिंतित हैं कि सोशल मीडिया के अत्यधिक उपयोग से बच्चे अनैतिक, उग्र, जिद्दी एवं आक्रामक भी हो रहे हैं, जो उन्हें चिंता और अवसाद में धकेल रहे हैं। बच्चें सोशल मीडिया पर वक्त ज्यादा गुजार रहे हैं, ऑनलाइन गेम्स ने बच्चों की दुनिया ही बदल दी है। अब ये आवाज उठने लगी है कि क्यों न बच्चों के लिए सोशल मीडिया के उपयोग को प्रतिबंधित कर देना चाहिए? टेन के हार्परकॉलिन्स और नीलसन आईक्यू की एक अंतरराष्ट्रीय रिपोर्ट में ऐसे ही चिन्ताजक तथ्य सामने आये हैं कि बड़ी संख्या में युवा माता-पिता कहानियों की बजाय डिजिटल मनोरंजन को प्राथमिकता दे रहे हैं। पंचतंत्र से लेकर स्नो व्हाइट पिनोकियो जैसी कहानियां अब शेल्फ पर धूल फांक रही हैं। नये बन रहे समाज एवं परिवार में सोशल मीडिया जहर घोल रहा है।

स्मार्टफोन बड़ों ही नहीं, बच्चों के हाथ में आ गया है। जवान और बूढ़े ही नहीं छोटे-छोटे बच्चे तक इसके आदी होते जा रहे हैं। व्हाट्सएप, फेसबुक, गेम्स सब कुछ स्मार्टफोन पर होने की वजह से बच्चों और युवाओं में इसकी आदत अब धीरे-धीरे लत में तब्दील होती जा रही है। सोने के समय बच्चों को कहानियां सुनाना या उनके लिए लोरियां गाना कभी पारिवारिक संस्कृति का अहम हिस्सा हुआ करता था। दादी-नानी हों या माता-पिता की सुनाई गई परीकथाएं बच्चों के लिए नींद से पहले की सबसे प्यारी यादें होती थीं। लेकिन अब सोशल मीडिया के आने से इसके बिना बचपन सूना हो रहा है। बच्चे किताबों और खेलकूद के मैदानों से दूर हो रहे हैं। स्क्रीन की नीली रोशनी उनकी आंखों के साथ दिमागी सेहत पर भी बुरा असर डाल रही है। इसके अलावा शारीरिक श्रम एवं रचनात्मकता भी कम हो गई है। यह केवल पश्चिमी देशों की ही नहीं, भारत की भी सच्चाई बन चुकी है। जेन जेड यानी 1996 से 2010 के बीच जन्मे युवा माता-पिता अब इस प्यारी परंपरा से मुंह मोड़ रहे हैं। हालिया शोधों से पता चला है कि अब कहानियां पढ़ना-सुनाना जेन जेड माता-पिता के लिए जिम्मेदारी एवं

मनोरंजन नहीं बल्कि एक थकाऊ काम बन गया है। मोबाइल अब केवल बच्चों के लिए ही समस्या नहीं है, बल्कि बड़े भी इसकी चपेट में हैं। यह सिर्फ फोन या मैसेज करने तक ही सीमित नहीं रहा है। ना जाने कितने ही तरह के ऐप्स, व्हाट्सएप, फेसबुक जैसी सोशल मीडिया एप, और गेम्स बड़ो एवं बच्चों को दिन भर व्यस्त रखते हैं। लेकिन अगर मोबाइल के बिना आपको बेचैनी होती है तो समझ जाइये कि आप भी इस एडिक्शन के शिकार होते जा रहे हैं जो आपके लिए चिन्ता की बात है।

टेन के हार्परकॉलिन्स और नीलसन आईक्यू की ताजा रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में खासकर महानगरों और शहरी इलाकों में सोशल मीडिया का बच्चों में प्रचलन अधिक बढ़ रहा है। पढ़ने को मनोरंजन एवं ज्ञान का हिस्सा मानने की बजाय 'गंभीर पढ़ाई' से जोड़कर देखा जा रहा है। रिपोर्ट के मुताबिक नई पीढ़ी के अभिभावकों को लगता है कि बच्चों को कहानी सुनाना एक अतिरिक्त जिम्मेदारी है। शहरीकरण एवं पारिवारिक संरचना में बदलते स्वरूप से पिछले दस सालों में बड़े बदलाव हुए हैं, संयुक्त परिवार की जगह अब एकल परिवार हैं, जहां दादी-नानी जैसे कहानी सुनाने वाले सदस्य मौजूद नहीं है। समय की कमी, कामकाजी जीवन की व्यस्तता और थकान के कारण माता-पिता के पास बच्चों को कहानी सुनाने का समय नहीं बचता। नई पीढ़ी के माता-पिता खुद ही पढ़ने की आदत से दूर हो चुके हैं, जिससे बच्चों को प्रेरणा नहीं मिलती। स्कूल का होमवर्क भी इसमें बड़ी बाधा है। रिपोर्ट के आंकडों के अनुसार 41 प्रतिशत माता-पिता ही रोज अपने चार साल तक के बच्चों को कहानी सुनाते हैं। जबकि 2012 में यह आंकड़ा 64 प्रतिशत था। 28 प्रतिशत जेन जेड माता-पिता पढ़ने को एक मजेदार गतिविधि नहीं मानते।

बच्चों की सोशल मीडिया चैनल्स पर उपस्थिति उन्हें वास्तविक जीवन से दूर करके वर्चुअल दुनिया में ले जा रही है। जहां दिखावटीपन एवं नकारात्मकता की भरमार है। इससे बच्चों का बचपन तो छिन ही रहा है, उनका मानसिक एवं शारीरिक विकास भी अवरुद्ध हो रहा है। सोशल मीडिया यानी यूट्यूब-इंस्टा, अन्य सोशल साइट की लत बच्चों को वास्तविक दुनिया से दूर कर रही है और उनकी एकाग्रता, याददाश्त और ध्यान की क्षमता को कम करके उन्हें अपंग, बीमार एवं हिंसक बना रही है। बच्चे अपने प्रश्नों का हल या समस्या का निवारण किताबों में ढूंढकर पढ़ने के बजाय केवल मोबाइल पर ढूंढने के आदी होते जा रहे हैं जो उचित नहीं है। मोबाइल और साइबर एडिक्शन अब एक गम्भीर समस्या बनती जा रही है जो बच्चों की दिनचर्या पर बुरा असर डाल रही है। इससे मानसिक विचलन और चिड़चिड़ापन बढ़ता जा रहा है कि हम छोटी छोटी बातों पर घर-परिवार के सदस्यों पर गुस्सा करने लग गये हैं।

मोबाइल आपके बच्चे से उसका बचपन ही नहीं छीन रहा है बल्कि उसे हिंसक भी बना रहा है। हरियाणा में 9 साल के एक बच्चे को इसकी इतनी बुरी लत थी कि उसने स्मार्टफोन छीने जाने की वजह से अपना हाथ काटने की कोशिश की। मोबाइल की लत का ये इकलौता मामला नहीं है। 12 साल का अविनाश मोबाइल के बिना एक पल नहीं रह सकता। उससे अगर मोबाइल छीन लिया जाये तो वो गुस्से में आ जाता है। ऐसी ही लत है भोपाल यूनिवर्सिटी की प्रिया को। उसे व्हाट्सऐप की ऐसी लत लगी कि वह पूरी रात जगी रह जाती है। अब वह इस लत से छुटकारा पाने के लिए मानसिक अस्पताल में काउन्सलिंग ले रही है। मोबाइल की लत से बच्चे आपराधिक भी होते जा रहे हैं और गलत कदम तक उठा रहे हैं। अभी हाल ही में ग्रेटर नोएडा में एक 16 वर्षीय लड़के ने अपनी माँ और बहन की हत्या कर दी क्योंकि बहन ने शिकायत कर दी थी कि भाई दिन भर मोबाइल फोन पर खतरनाक गेम खेलता रहता है और इसलिए माँ ने बेटे की पिटाई की, उसे डाँटा और उसका मोबाइल छीन लिया। मोबाइल पर मारधाड़ वाले गेम खेलते रहने के आदी लड़के का गुस्सा इसी से बढ़ गया। इसी तरह कुछ महीनों पहले कोटा में एक 16 वर्षीय किशोर ने फाँसी लगाकर आत्महत्या कर ली। पुलिस की जांच पड़ताल में पता चला कि बच्चे को पबजी गेम खेलने की लत थी और दिनभर मोबाइल में गेम खेलता रहता था। जब घरवालों ने मोबाइल छीन लिया और देने से मना कर दिया तो यह गलत कदम उठा लिया।

देश में बड़े अस्पतालों में मोबाइल की लत के शिकार लोगों के इलाज के लिए खास क्लीनिक हैं। और यहाँ आने वाले मरीजों की संख्या जिनमें बच्चें बहुतायत में हैं, अब दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। मोबाइल और एप बनाने वाली कम्पनियां अपने मुनाफे के लिए कितनी अमानवीय हो गयी हैं कि यह सब जानते हुए भी लोगों को मानसिक रोग के गड्ढे में धकेल रही हैं। वे नये-नये गेम बनाकर मुनाफा बटोर रही हैं। परिवार एवं समाज में जागरूकता अभियान के साथ सरकार को इस उभर रहे बड़े संकट पर ध्यान देना होगा। बच्चों को खेल, कला, संगीत और अन्य गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। बच्चों को ऑनलाइन सुरक्षा के बारे में जानकारी दें और उन्हें साइबर अपराधों से बचने के तरीके सिखाएं। बच्चों को सोशल मीडिया का उपयोग करने के बारे में सही जानकारी देना और उन्हें इसके नकारात्मक प्रभावों से बचाना जरूरी है।

स्मोकिंग और सांसें

भाषणा बंसल गुप्ता
स्तंभकार

हमें जिंदा रहने के लिए क्या चाहिए? आप शायद इस सवाल पर हंस रहे होंगे कि कितना बचकाना सवाल है। बच्चा-बच्चा जानता है, कि जीवित रहने के लिए हमारी सांसों का चलना बहुत जरूरी है। सांसें गईं, तो सब गया। मतलब इन्सान खत्म। जितना सच ये है कि, सांसों की जरूरत के बारे में सबको पता है, उतना ही बड़ा सच ये भी है कि, शायद ही कोई ऐसा इन्सान होगा, जिसे पता नहीं होगा कि स्मोकिंग और सांसों के बीच क्या रिश्ता है। स्मोकिंग का सीधा संबंध, हमारे फेफड़ों से है। स्मोकिंग चाहे किसी भी रूप में हो, वो इन्सान के फेफड़ों को तबाह कर देती है। फेफड़े ही हैं, जो हमारी सांसों को चलता रखते हैं। ये खराब होते हैं, तो सांसों की लड़ी भी टूटने लगती है, बिखरने लगती है।

इस बात में भी सौ प्रतिशत सच्चाई है कि सब जानते हैं कि स्मोकिंग करना गलत है। इससे फेफड़े खराब होते हैं। सिगरेट की डिब्बी पर भी लिखा होता है कि ये स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इससे कैंसर होने का डर होता है। लेकिन फिर भी स्मोकिंग का चलन कम होने की बजाय, बढ़ता ही जा रहा है। ऐसा क्यों है?

हर जगह मौजूद हूं मैं

इसका मुख्य कारण है - स्मोकिंग प्रोडक्ट आसानी से मिलना। 18 साल से ऊपर का कोई भी व्यक्ति बड़े आराम से इन्हें खरीद सकता है। ये हर किसी के लिए आसानी से उपलब्ध हैं। और कुछ मिले न मिले, हर गली-नुक्कड़ की दुकान मिल जाती है, जहां इन्सान के फेफड़ों को गलाने का सामान धड़ल्ले से बेचा जाता है।

डिटेक्टिव गुरू राहुल राय गुप्ता कहते हैं, 'मैंने जबसे अपनी कंपनी खोली है, तब से यही नियम बनाया है कि, स्मोकिंग करने वाला कोई भी इंसान हमारी कंपनी में काम नहीं करेगा। इंटरव्यू के दौरान, कैंडिडेट से पूछा जाता है कि वो स्मोकिंग तो नहीं करता। मेरे ख्याल से हर ऑफिस में यही नियम होना चाहिए। मेरी कंपनी में ही नहीं, बल्कि मेरे घर में भी कोई स्मोकिंग नहीं कर सकता। मैं अपनी गाड़ी में किसी को स्मोकिंग करने की परमिशन नहीं देता, चाहे वो इंसान कितना भी खास क्यों न हो। लेकिन बड़े अफसोस की बात है कि, बड़ी-बड़ी कंपनियां अलग से 'स्मोकिंग जोन' बनाती हैं, जहां लोग ह्यस्मोक ब्रेकह्व के लिये जाते हैं। ये एक तरह से उन लोगों के

साथ सहानुभूति की तरह लगता है। उनकी जरूरत बना दिया गया है। जिसको पूरा करना कंपनी अपना फर्ज समझती है। हर एयरपोर्ट पर ऐसे जोन बने होते हैं। ऐसे जोन्स की जरूरत ही बताती है कि हम स्मोकिंग रोकने को कितना सीरियसली लेते हैं।'

बड़ी-बड़ी हस्तियां गुलाम हैं मेरी

स्मोकिंग के बढ़ते चलन का एक और बड़ा कारण है झ फिल्मों, सीरीज में इसका बहुत ज्यादा प्रयोग। बॉलिवुड की फिल्में हों, या टॉलिवुड की या फिर हॉलिवुड की, हर जगह पात्रों से इतनी ज्यादा स्मोकिंग करवाई जाती है, कि दर्शकों को लगने लगता है कि, स्मोकिंग इन्सान की ज़िंदगी का एक अभिन्न अंग है। ये कोई खराब बात नहीं है। आपने देखा होगा कि, जैसे ही फिल्म या सीरीज के मुख्य पात्र को कोई टेंशन होती है, तो वो झट से सिगरेट सुलगा लेता है। इससे दर्शकों के मन में ये संदेश जाता है कि, स्मोकिंग, तनाव को दूर करती है।

जब लोग अपने मनपसंद हीरो को पर्दे पर स्मोकिंग करते देखते हैं, तो उनको लगता है कि ये तो आम बात है। ऐसा सब करते हैं। यही नहीं, जब असली ज़िंदगी में भी लोग, बड़े-बड़े एक्टर्स के बारे में पढ़ते हैं, कि उसे स्मोकिंग करने की लत है, तो वो उनको और ज्यादा प्रोत्साहन मिलता है। उनको लगता है कि, एक्टर्स तो अपने स्वास्थ्य को बेहद गंभीरता से लेते हैं। क्या उनको अपनी ज़िंदगी की फिक्र नहीं है? मतलब, वो ये मान लेते हैं कि ये इतनी बड़ी या गलत बात नहीं है।

फिल्मों और सीरीज में बेवजह ही ऐसे सीन ठूंस दिए जाते हैं। कहानी की मांग कहकर, निर्मार्ता-निर्देशक इससे अपना पीछा छुड़ा लेते हैं। लेकिन हर कहानी की मांग ऐसी नहीं होती कि फ्लां व्यक्ति चेन स्मोकर है। पूरा दिन स्मोकिंग करता रहता है। कुछेक कहानियां ऐसी होती हैं, जहां पर इसका जिक्र होता है, उसे माना जाएगा कि कहानी की मांग है, स्मोकिंग।

मुझसे छुटकारा आसान नहीं

स्मोकिंग की लत को छोड़ना बेहद मुश्किल जरूर है, लेकिन नामुमकिन तो बिल्कुल भी नहीं है। अगर इच्छाशक्ति हो तो इसे छोड़ा जा सकता है। इससे छुटकारा पाने के लिए पहले अपने अवचेतन मन को तैयार करना होगा। उसे बताना होगा कि ये आपके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। हमारा अवचेतन मन बेहद मजबूत है। उसमें एक बार जो बात फिट हो जाती है, वो फिर मिटाए नहीं मिटती। इसलिए मन की गहराईयों से कहें कि स्मोकिंग आपके फेफड़े गला रही है। आपकी सांसों को खराब कर रही है। आपकी उम्र को कम कर रही है। रोजाना दिन में एक-दो बार भी ऐसा सोचेंगे तो आपका अवचेतन मन इसे ग्रहण कर लेगा और इसमें बैठ जाएगा कि जिंदा रहना है तो स्मोकिंग छोड़नी ही होगी। अच्छा स्वास्थ्य चाहते हैं, तो स्मोकिंग से किनारा करना ही होगा।

हमारा मन ही है, जो हमसे अच्छे या बुरे काम करवाता है। बस उस्को बोल दें कि, आपको खुश रहना है, जिंदा रहना है, स्वस्थ रहना है, आपका काम हो जाएगा। फिर मन आपको ऐसे-ऐसे सुझाव देगा कि आपका मन ही नहीं करेगा कि आप स्मोकिंग करें। यकीन मानिए, ऐसा जरूर होगा, बस मन में इस लत को छोड़ने की धुन पाल लें। फिर देखना, कैसे चमत्कार होगा।

पूरण चन्द्र शर्मा
स्तंभकार

गोस्वामी समाज क्यों कर रहा है कॉरिडोर का विरोध?

बांके बिहारी कॉरिडोर को लेकर पिछले कई सालों से जमकर विरोध हो रहा है’ विरोध करने वाले लोग मंदिर में पूजा-पाठ करने वाला गोस्वामी समाज है’ उन्होंने सख्त चेतावनी दी है कि अगर कॉरिडोर बना तो वे लोग अपने ठाकुरजी को लेकर यहां से पलायन कर जाएंगे’ गोस्वामियों का कहना है कि मंदिर उनकी निजी संपत्ति है, फिर इसमें सरकार दखल क्यों दे रही है’ उन्होंने कॉरिडोर निर्माण के लिए ट्रस्ट बनाए जाने को लेकर सरकार की तरफ से जारी अध्यादेश को मानने से ही इंकार कर दिया।’

वृंदावन के मूल स्वरूप के साथ खिलवाड़ करने से कुंज गलियां नष्ट हो जाएंगी और वृंदावन की संस्कृति भी खत्म होगी।’

बांके बिहारी लाल मंदिर के सेवायत आचार्य आनंद बल्लभ गोस्वामी का कहना है कि ठाकुर बांके बिहारी लाल जी आज भी कुंज गली होते हुए निधिवन जाते हैं, अतः उनके मार्ग को नष्ट करने का दुस्साहस न करें’

इसके अलावा दुकानें हटाए जाने से रोजी- रोटी पर असर पड़ेगा तथा मनमाने तरीके से दुकानों के टेंडर पास किए जाएंगे’

क्यों है कॉरिडोर की जरूरत?

दरअसल वृंदावन के बांके बिहारी मंदिर में हर दिन हजारों की संख्या में श्रद्धालु दर्शन के लिए पहुंचते हैं. अगर वीकेंड हो या फिर नए नया साल या होली या रंग भरनी एकादशी तो भक्तों की संख्या लाख के करीब

पहुंच जाती है। मंदिर में जाने के लिए रास्ता छोटा होने की वजह से व्यवस्था बिगड़ जाती है. दरअसल मंदिर तक कई सौ साल पुरानी कुंज गलियों से होकर गुजरना पड़ता है। कई बार भीड़ में लोगों के दबने की खबरें सामने आती है। इसीलिए सरकार चाहती है कि व्यवस्था इस तरह की हो जिससे श्रद्धालुओं को कोई परेशानी न हो और ज्यादा से ज्यादा लोग दर्शन के लिए आ सके।

कॉरिडोर बनाने की आवश्यकता ही नहीं

आचार्य आनंद वल्लभ गोस्वामी का मानना है कि इस समय बांके बिहारी जी मंदिर के जितने दर्शनाथी आ रहे हैं, इससे तीन गुना से अधिक दर्शनाथी आ सकते हैं।' इतनी जगह मंदिर के पास पूरे परिसर में है, जिसमें भोग भंडार के बगल का स्थान, इसके बाद पाठशाला तथा पोस्ट ऑफिस एवं बांके बिहारी जी का चबूतरा सब मिलकर के यदि इतना ही परिसर को चौड़ा कर दिया जाए तो एक बार में लगभग 25000 यात्री समा सकते हैं। इसके अलावा इस्कॉन के बगल वाला परिक्रमा मार्ग को कम से कम फोर लेन बना दिया जाए तथा एक्सप्रेस वे तक सीधे नैशनल हाईवे- 2 से जोड़ दिया जाए तो भीड़ जगह-जगह बट जाएगी। थोड़ा-थोड़ा अतिक्रमण हट जाए एवं ई रिक्शा स्टैंड, गाड़ी पार्किंग, जगह-जगह शौचालय आदि बन जाए तो कॉरिडोर बनाने की आवश्यकता ही नहीं होगी. इससे लोगों को परेशानी का सामना भी नहीं करना पड़ेगा तथा जमीन अधिग्रहण के समय दिया जाने वाला मुआवजा भी नहीं देना होगा। इससे सरकार को राजस्व की बचत होगी एवं वृन्दावन का वास्तविक स्वरूप भी बना रहेगा।'

क्या बांके बिहार मंदिर निजी संपत्ति नहीं?

गोस्वामियों का कहना है कि मंदिर उनकी निजी संपत्ति है। लेकिन रेवेन्यू डॉक्युमेंट्स के मुताबिक ऐसा नहीं है। इन दस्तावेजों में यह जमीन मंदिर के नाम से है ही नहीं बल्कि गोविंददेव के नाम से दर्ज है। कॉरिडोर बनाने के लिए मंदिर के पास 100 दुकानों और 300 घरों का अधिग्रहण किया जाना है। हालांकि सरकार इसके लिए उचित मुआवजा देगी। लेकिन लोग इसके लिए भी तैयार नहीं है।

5 एकड़ जमीन पर बनेगा कॉरिडोर

बता दें कि बांके बिहारी मंदिर के पास करीब 5 एकड़ जमीन पर कॉरिडोर बनना है। मंदिर तक जाने के लिए तीन रास्ते बनाए जाएंगे। श्रद्धालुओं को वाहन खड़ा करने में परेशानी न हो इसके लिए 37 हजार वर्ग मीटर में पार्किंग बनाई जानी है। हालांकि कॉरिडोर इस तरह से बनाया जाना है जिससे मंदिर का मूल स्वरूप पहले जैसा ही रहे।

कॉरिडोर के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में याचिका

देवेंद्र नाथ गोस्वामी ने सुप्रीम कोर्ट में 19 मई को एक याचिका दायर कर कहा था कि प्रस्तावित पुनर्विकास परियोजना का कार्यान्वयन अव्यावहारिक है और मंदिर के कामकाज से ऐतिहासिक और परिचालन रूप से जुड़े लोगों की भागीदारी के बिना मंदिर परिसर के पुनर्विकास का कोई भी प्रयास प्रशासनिक अराजकता का कारण बन सकता है। उन्होंने अदालत के आदेश में संशोधन किए जाने की अपील की थी. दरअसल कोर्ट ने 15 मई को बांके बिहारी मंदिर कॉरिडोर को विकसित करने की यूपी सरकार की योजना का मार्ग प्रशस्त कर दिया था।

बता दें कि सुप्रीम कोर्ट ने यूपी सरकार की तरफ से दायर जनहित याचिका पर इलाहाबाद हाई कोर्ट के 8 नवंबर, 2023 के उस आदेश को 15 मई को संशोधित किया था जिसमें राज्य की महत्वाकांक्षी योजना को स्वीकार किया गया था लेकिन राज्य को मंदिर की निधि का इस्तेमाल करने की अनुमति देने से इनकार कर दिया गया था।

याचिका में क्या है गोस्वामी का दावा?

वहीं देवेंद्र नाथ गोस्वामी की याचिका में दावा किया गया था कि कॉरि-डोर बनाए जाने से मंदिर और उसके आसपास के पारिस्थितिकी तंत्र के धार्मिक और सांस्कृतिक चरित्र के बदलने की आशंका है जिसका गहरा ऐतिहासिक और भक्ति संबंधी महत्व है. बता दें कि देवेंद्र नाथ मंदिर के संस्थापक स्वामी हरिदास गोस्वामी के वंशज हैं और उनका परिवार पिछले 500 सालों से मंदिर का प्रबंधन कर रहा है. मंदिर का ट्रस्ट पहले से बना हुआ है। फिर नए ट्रस्ट बनाने की आवश्यकता क्यों ? बाहरी लोग न्यास में शामिल होने से उनका अनावश्यक हस्तक्षेप होगा जिसके चलते मंदिर के संचालन में परेशानी आयेगी सैकड़ों सालों से चली आ रही ठाकुर बांके बिहारी जी की पूजा- अर्चना में बाधा डाली जाएगी जिसे हम किसी भी रूप में स्वीकार नहीं कर सकते हैं।'

सरकार जनहित के लिए जो भी कार्य करेगी उस में हमारा पूरा सहयोग एवं समर्थन रहेगा बशर्ते वृन्दावन की प्राचीन संस्कृति, परंपरा एवं इसके पुराने स्वरूप में किसी प्रकार की छेड़-छाड़ न हो' यहां के दुकानदारों को भी आशंका है कि जिस तरह से अयोध्या में जिस दुकान का मुआवजा 1.5 लाख रुपए मिला, उसी साईज की दुकानों को 15 से 20 लाख रुपए में बेचा गया। '

लोगों को आशंका है कि बृजवासियों की अधिगृहीत जमीन का एक हिस्सा मॉल एवं आलीशान होटल बनाने के लिए पूंजीपतियों को न बेच दें ' यदि सरकार ऐसा करती है तो बृजवासी अपने आप को ठगा सा महसूस करने लगेंगे।'

अब राज्य सरकार की जिम्मेदारी बनती है कि गोस्वामी समाज एवं स्थानीय लोगों को भरोसा दिलाए कि किसी को कोई परेशानी नहीं होगी तथा काम में ईमानदारी एवं पारदर्शिता बरती जाएगी।'

विजय गर्ग
वरिष्ठ स्तंभकार

वर्षा जल संग्रह समय की जरूरत

मानसून का आगमन हो गया है। बंगलुरु और मुंबई सहित अनेक शहरों में मानसून पूर्व की बारिश होने लगी है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। किसी भी कृषि प्रधान देश के लिए मानसून के दिनों में होने वाली बारिश महत्त्वपूर्ण होती है। आज भी भारतीय किसानों का एक बड़ा हिस्सा सिंचाई के लिए बरसाती पानी पर ही निर्भर है। आज जबकि दुनिया की आबादी का एक बड़ा हिस्सा शुद्ध पेयजल की नियमि आपूर्ति से वंचित है, तो बरसात का स्वागत किया जाना चाहिए। मानसून हमें वर्षा जल का संग्रह करने का अवसर देता है ताकि भविष्य की जरूरतों के लिए उस कीमती निधि को बचा सकें जिसके लिए रहीम ने बहुत पहले कह दिया था- 'रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब बसून'

मानसून का स्वागत किए जाने का तात्पर्य यह है कि हम बरसात के पानी के सदुपयोग और संरक्षण के प्रति सचेत हों और अपेक्षित तैयारियां रखें। दरअसल, देश में पानी की प्रति व्यक्ति उपलब्धता के आंकड़ों को देखें, तो समझ में आता है कि वर्षा जल का संरक्षण क्यों आवश्यक है। हमेशा जल की उपलब्धता बनी कुछ इलाकों खासकर गर्मी के दिनों में, जरूरत के पानी के लिए भी हिंसक संघर्ष की नौबत आ जाती है। इसका कारण यह है कि भारत में जल संसाधनों की स्थिति एक समान नहीं है।

आंकड़े बताते हैं कि भारत में लगभग 71 फीसद जल संसाधन देश के 36 फीसद हिस्से में केंद्रित हैं जबकि देश के शेष 64 फीसद क्षेत्र में केवल 29 फीसद जल संसाधन हैं। यानी देश के एक बड़े हिस्से को अपनी जरूरत के पानी के लिए जल संग्रह की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे बरसात का जो पानी व्यर्थ बह जाता है, उसे यदि सहेज लिया जाए, तो आबादी के एक बड़े हिस्से को जलसंकट के कारण होने वाली परेशानियों से बचाया जा सकता है। भारत में औसत वार्षिक वर्षा करीब 115 इंच होती है। मगर इस वर्षा का वितरण भी भारत के अलग-अलग भूभाग में समान नहीं है। महत्त्वपूर्ण यह है कि करीब 8.6 करोड़ हेक्टेयर में भारत की खेती सिंचाई संबंधी सुविधा के लिए बारिश पर ही निर्भर है।

कुछ समय तक बस्तियों, शहरों और गांवों में बरसात के पानी को सहेजने के लिए तालाब, झील, कुएं, बावड़ी, कुंड और जोहड़ बनाए जाते थे। ये जल संसाधन न केवल बरसात के पानी को सहेज कर लोगों को साल भर जरूरत का पानी मुहैया कराते थे, बल्कि संचित पानी से भूजल का स्तर बनाए रखने में भी मदद करते थे। चूंकि इन संसाधनों की सामाजिक उपयोगिता बहुत थी, इसलिए इनके निर्माण को पुण्य कार्य माना जाता था। सक्षम लोग विशिष्ट अवसरों पर जल संसाधनों का निर्माण करवाते थे। राजस्थान के बूंदी जिले के हिंडौली कस्बे के एक तालाब की कथा तो बहुत ही रोचक है। एक बंजारे की बेटी की शादी इस कस्बे में हुई थी। उन दिनों बंजारे घूम-घूम कर व्यापार करते थे और बहुत संपन्न हुआ करते थे। एक दिन किसी बात से क्षुब्ध उस बंजारे की बेटी को उसकी सास ने ताना मारते हुए कह दिया कि यहां कौन से तुम्हारे पिता ने पानी का इतना इंतजाम कर रखा है कि तू खूब पानी बहाए।' यह बात बंजारे को पता चली तो वह अपने लश्कर सहित हिंडौली आया और वहां एक तालाब खुदवाने के बाद ही लौटा।

बावड़ियां और कुंड तो जल संग्रह करने के साथ अपने समय के स्थापत्य की समृद्धि का प्रमाण भी देते थे। गुजरात की रानी की बावड़ी अपने स्थापत्य के कारण ही प्रसिद्ध है और दूर-दूर से पर्यटक इसे देखने आते हैं। पुराने किलों में तो तालाबों के अंदर भी बावड़ियों और कुओं का निर्माण कराया जाता था, ताकि आपात परिस्थिति में संग्रहीत वर्षा जल के कारण लोगों को पानी की कमी का सामना नहीं करना पड़े। मध्यप्रदेश के ग्वालियर के निकट नरवर के किले का इतिहास नल-दमयंती के आख्यान से भी जुड़ा है। इस किले में राजा नल के महल बाहर एक विशाल तालाब है और इस तालाब के अंदर भी आठ कुएं और नौ बावड़ियां हैं।

समय के साथ पुराने जल संसाधन उपेक्षा के शिकार हो गए। अधिकतर प्राचीन जलाशय बरसात के पानी के प्रवाह की राह में होते थे। बरसात का पानी बह कर इनमें एकत्र हो जाता था। पश्चिमी राजस्थान में तो ऐसा तंत्र विकसित था कि एक तालाब के भरने पर पानी दूसरे तालाब की और बह निकलता था। वर्षा जल संग्रह के प्रति इस क्षेत्र के लोग कितने जागरूक थे,

इसका अनुमान जैसलमेर के गढ़सीसर तालाब के उदाहरण से लगाया जा सकता है। ब । बरसात के पहले लोग श्रमदान कर इस तालाब की सफाई करते थे। स्वयं शासक इसमें श्रमदान करते थे। पहली बारिश के बाद इस खूबसूरत तालाब में नहाने आदि पर प्रतिबंध था ताकि तालाब का पानी गंदा नहीं हो। समूचे क्षेत्र में इसी तरह से बरसात के पानी के संग्रह और उसकी शुद्धता को बनाए रखने का चलन था। लेकिन जब से पानी नलों के माध्यम घर-घर पहुंचने लगा, तो लोग इन प्राचीन संसाधनों के प्रति उदासीन हो गए। देश में अधिकांश तालाबों को रिहाइशी बस्तियों के लिए और कुंडों को व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के लिए पाट दिया गया। लोगों ने कचरा फेंक- फेंक कर बावड़ियां और कुएं अनुपयोगी कर दिए।

पुराने जलस्रोतों के मार्ग में नई बसावट या नए निर्माण का एक नुकसान यह भी हुआ कि जरा सी बारिश से बस्तियों में जल जमाव की स्थितियां बनने लगी हैं। महानगरों में बढ़ती जनसंख्या के कारण नई बस्तियों का निर्माण फिर भी शहरी प्रबंधन की एक बड़ी आवश्यकता माना जा सकता है, लेकिन देश के छोटे-छोटे शहरों में भी मामूली बारिश जल प्लावन का दृश्य उपस्थित कर देती है। उसका एक बड़ा कारण यह है कि शहरों की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए वर्षा जल के प्रवाह को सहेजने के लिए पुराने समय में जो जलस्रोत बनाए गए थे, उन्हें या तो उपेक्षा के गर्त में धकेल दिया गया या अतिक्रमण का शिकार बना दिया गया।

चंबल नदी के किनारे बसे होने के बावजूद राजस्थान के कोटा शहर की अनेक बस्तियों का भूजल स्तर इसीलिए तेजी से गिरा है। अस्सी के दशक के अंत बनी एक नीति के तहत हर बस्ती में पानी पहुंचाने की नीयत से खूब नलकूप खोदे गए। हमने धरती के गर्भ का पानी अपने सुख के लिए उपयोग करने की नीति तो बना ली, लेकिन भूजल स्तर को बनाए रखने के उपायों पर गंभीरता से विचार नहीं किया। परिणाम यह है कि भारत के अधिकांश हिस्सों में भूजल तेजी से कम हो रहा है। जब शुद्ध पानी की उपलब्धता समूची मानव जाति के लिए बड़ी चुनौती बनती प्रतीत होने लगी हो, तो अब आवश्यक है कि हम वर्षा जल के संग्रह और संरक्षण के प्रति सचेत हों।

फंगस संक्रमण का खतरा

विजय गर्ग

पृथ्वी के तापमान में वृद्धि के कारण ऐसे रोगजनक सक्रिय हो सकते हैं जिनके बारे में पहले ज्यादा जानकारी नहीं थी । विज्ञानियों ने एस्परजिलस नामक फंगस के बढ़ते प्रसार के प्रति चिंता व्यक्त की है, जिसमें जलवायु परिवर्तन और गर्म तापमान की भूमिका भी शामिल है। यह प्रकार की फफूंदी मानव, पौधों और जानवरों में गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न कर सकती है और कुछ मामलों में मृत्यु का कारण भी बन सकती है। हाल में किए गए एक अध्ययन में ब्रिटेन के शोधकताओं ने फंगस के विस्तार का एक माडल तैयार किया है, जिसमें बताया गया है कि फंगस की तीन प्रजातियां, एस्परजिलस फ्यूमिगेटस, एस्परजिलस फ्लेक्स और एस्परजिलस नाइजर, अगले 70-80 वर्षों में उत्तर की ओर फैलेंगी। मैनचेस्टर विश्वविद्यालय के पर्यावरण विज्ञानी नार्मन वैन रिजन का कहना है कि आद्रता और चरम मौसम की घटनाओं जैसे पर्यावरणीय कारकों में परिवर्तन, आवासों को बदल देंगे और फंगस के अनुकूलन और प्रसार को बढ़ावा देंगे।

गंभीर जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में, यूरोप में एस्परजिलस फ्यूमिगेटस का प्रसार 15 वर्षों में 77.5 प्रतिशत बढ़ सकता है, जिससे 90 लाख और लोगों को संक्रमण का खतरा हो सकता है। एस्परजिलस फ्लेक्स, जो गर्म क्षेत्रों को तरजीह देता है, यूरोप में 16 प्रतिशत तक फैल सकता है, जिससे अतिरिक्त 10 लाख लोग जोखिम में पड़ सकते हैं। इस प्रकार के फंगस संक्रमण कमजोर व्यक्तियों, विशेषकर कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली वाले लोगों के लिए अधिक खतरनाक हो सकते हैं। फंगस के प्रकोप से फसलें नष्ट हो सकती हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में दुनिया की आबादी को भोजन उपलब्ध कराने में चुनौतियां बढ़ सकती हैं। एशिया, यूरोप और अन्य क्षेत्रों में एस्परजिलस फंगस के साथ मानव संपर्क में वृद्धि से सार्वजनिक स्वास्थ्य का बोझ बढ़ सकता है और फसल सुरक्षा परिदृश्य में बदलाव आ सकता है।

इसके अलावा, एक अन्य फंगस, कैंडिडा आरिस भी विज्ञानियों के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। यह फंगस भी दुनिया के गर्म होने के साथ-साथ नए क्षेत्रों में फैल रहा है और अन्य प्रजातियों के भी इसके अनुसरण करने की संभावना है। इन फंगस प्रजातियों का एक दूसरा पहलू यह है कि वे पर्यावरण संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे पारिस्थितिकी तंत्र को लाभ पहुंचाते हैं, जिसमें कार्बन और पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण शामिल है। जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले बदलावों पर विचार करते समय इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। विज्ञानियों का कहना है कि फंगस रोगजनकों के प्रभावों को कम करने के लिए जागरूकता बढ़ाना और प्रभावी चिकित्सीय उपचार विकसित करना भी जरूरी होगा।

(लेखक सेवानिवृत्त प्रिंसिपल हैं।)

शहरों के टैगलाइन

भारत की विविधता और सांस्कृतिक समृद्धि उसके हर शहर में झलकती है। कुछ शहर अपनी ऐतिहासिक विरासत के लिए जाने जाते हैं, तो कुछ आधुनिकता और रफ्तार का प्रतीक बन चुके हैं। जयपुर को ह्यपिंक सिटीह्न कहा जाता है- वह शहर जहां हर इमारत गुलाबी रंग में सजी होती है। लखनऊ को 'नवाबों का शहर' कहा जाता है- जहां तहजीब, शायरी, और शाही अंदाज आज भी जिंदा है। वहीं जब बात मुंबई की आती है तो सवाल उठता है- 'मुंबई को क्या कहा जाता है?'

मुंबईः सपनों का शहर

मुंबई को अक्सर 'सपनों का शहर' कहा जाता है। यह नाम यूं ही नहीं दिया गया है। यह शहर हजारों-लाखों लोगों के लिए एक उम्मीद की किरण है, जो अपने सपनों को पूरा करने यहां आते हैं। चाहे वह अभिनय की दुनिया में नाम कमाना हो, एक बड़ी कॉर्पोरेट नौकरी की तलाश हो, या अपनी छोटी सी दुकान खोलने की ख्वाहिश हो- मुंबई हर किसी को जगह देती है।

यहां हर वर्ग, हर भाषा, हर धर्म का इंसान साथ जीता है। यहां कोई 'बॉम्बे टिफिन सर्विस' चलाकर लाखों कमा रहा है तो कोई चौपाटी पर भेलपुरी बेचकर जीवन बिता रहा है। मुंबई में एक आम आदमी भी रोज ट्रेन की भीड़ में लटकते हुए सपनों की ओर दौड़ता है।

मुंबईः मायानगरी

मुंबई को 'मायानगरी' भी कहा जाता हैह्न यह हिंदी सिनेमा का केंद्र है। बॉलीवुड, जो न केवल भारत बल्कि विश्वभर में भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है, मुंबई की धरती पर ही जन्मा और पला-बढ़ा है। फिल्म इंडस्ट्री की चकाचौंध, बड़े-बड़े स्टार्स के बंगले और लाखों की भीड़ जो सिर्फ एक झलक पाने को उमड़ती है - यह सब मायानगरी की पहचान हैं। यह वही शहर है जहां एक साधारण सा इंसान एक दिन अभिनेता बन सकता है या एक स्ट्रीट परफॉर्मर सोशल मीडिया के जरिए पूरी दुनिया में मशहूर हो सकता है।

मुंबईः वित्तीय राजधानी

मुंबई केवल भावनाओं और सपनों का नहीं बल्कि भारत की आर्थिक शक्ति का भी प्रतीक है। यहां देश का सबसे बड़ा शेयर बाजारह्न बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज हैं, और रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया का मुख्यालय भी यहीं स्थित है। देश के बड़े-बड़े कॉर्पोरेट घराने- रिलायंस, टाटा, अडानी- का संचालन यहीं से होता है। मुंबई का बंदरगाह, देश की व्यापारिक गतिविधियों का अहम केंद्र है। यही वजह है कि मुंबई को 'भारत की आर्थिक राजधानी' भी कहा जाता है।

मुंबईः जिंदगी की रफ्तार

जहां जयपुर में ऐतिहासिक हवेलियां और लखनऊ में अदब की चुप्पी होती है वहीं मुंबई में हर चीज तेज है। यहां की लोकल ट्रेनें, ट्रैफिक और यहां के लोगों की दिनचर्या। सुबह 6 बजे से रात 12 बजे तक यह शहर चलता रहता है। मुंबई में रहने वाला हर इंसान घड़ी की सुई से बंधा लगता है। यह शहर सिखाता है कि समय का महत्व क्या है और कठिन परिस्थितियों में भी कैसे आगे बढ़ा जाए।

मुंबईः विविधता में एकता

मुंबई भारत के हर कोने से आए लोगों का घर है- उत्तर भारत से आए मजदूर, दक्षिण भारत से आए टेक्नोक्रेट्स, गुजरात के व्यापारी, बंगाल के कलाकार, और बिहार के छात्र- सभी यहां एक साथ रहते हैं। यह विविधता ही इसकी असली खूबसूरती है। गणेश चतुर्थी, नवरात्रि, ईद, क्रिसमस, और होली - हर त्योहार पूरे जोश से मनाया जाता है। मुंबई का स्ट्रीट फूड- वड़ा पाव, पाव भाजी, मिसल पाव, भेलपुरी- जितना स्वादिष्ट है, उतना ही इसकी गली-कूचों में बसे लोगों का मेल-जोल दर्शाता है।

मुंबई : हॉलीवुड ऑफ इंडिया

मुंबई हिंदी फिल्म इंडस्ट्री 'बॉलीवुड' का गढ़ है। मुंबई को 'हॉलीवुड ऑफ इंडिया' कहा जाता है क्योंकि यह भारत की फिल्म इंडस्ट्री का सबसे बड़ा और सबसे प्रभावशाली केंद्र है, जैसे कि हॉलीवुड अमेरिका में है। यहां सबसे ज्यादा हिंदी फिल्में बनाई जाती हैं, जो न केवल भारत में बल्कि दुनिया भर में देखी जाती हैं।

इसके अलावा मुंबई में कई प्रमुख फिल्म स्टूडियोज हैं। ये स्टूडियोज भारत की कुछ सबसे सफल फिल्मों का निर्माण करते हैं। साथ ही अमिताभ बच्चन, शाहरुख खान, सलमान खान, दीपिका पादुकोण, आलिया भट्ट जैसे कई सुपरस्टार्स मुंबई में ही रहते हैं। इस वजह से मुंबई को स्टारडम का शहर भी कहा जाता है।

ग्लोबल ऑब्ज़र्वर

मतलब निर्भीक और निष्पक्ष — इस छोर से उस छोर तक

RNI NO. DELHIN/2016/71079

निर्भीक पत्रकारिता की जीती जागती मिसाल है ग्लोबल ऑब्ज़र्वर

आपके मन की बात होती है यहां साफ़गोई के साथ

सरकार की आलोचना इसलिए कि यह पत्रकारिता का धर्म है

आपकी क़लम को ताक़त
और आपको शोहरत दिलाने के लिए
एक अवसर लेकर आया है -
'ग्लोबल ऑब्ज़र्वर'। चाहते हैं अगर
आपकी ख़बरों का हो देशव्यापी असर तो
इस अवसर को लपक लें। अपना बायोडाटा
इस मेल पर भेजें:-
globalobserver@gmal.com